कृपापूर्वक पक्षपातत्याग इसका अध्ययन कीजिये

॥ ओ३म् ॥

नमः सर्वात्मने श्री जगदीश्वराय

शीतलसन्तापहरण

प्रथम भाग

SHITAL SANTAP HARAN

FIRST PART

अर्थात्

श्रीमान् ठाकुर शीतल प्रशाद जी कमतौल प्रान्त दरभंगा निवासी के अल्पज्ञता वश किये हुए प्रश्नों तथा शिल्पकारों को निन्दित बतलाने वाली बिडम्बना का युक्ति युक्त वेदादि सच्छास्त्रों तथा अनेक प्रमाणिक ग्रन्थों के प्रमाणों द्वारा खण्डन, उनकी सेवा में कै एक प्रश्न, और आदि शिल्पकारों के वंशजों के ब्राह्मणत्व तथा महत्व को प्रतिपादन करने वाला अपूर्व ग्रन्थ

जिसको

श्रीमान् पण्डित भोलाराम आदि, गौड़ मैथिल ओझा के पुत्र शिवनारायण झा ने रचा। और लोकोपकारार्थ

रामभूषण यन्त्रालय आगरा से छपाकर प्रकाशित किया।

Registered under section 18&19 of act XXV of 1867

संवत् १९६८ विक्रमी। आर्य्यवत्सर १९७२९४९०११! श्रीमद्दयानन्दाब्द २८

प्रथमवार १००० } सन् १९११ ई० { मूल्यम् ।) डाकव्यय -)

Printed under the authority of Rishishwar Nath Bhatta B. A.
Propr. Ram Bhooshun Press, Agra.

विज्ञापन १

मूल्य

घटगया ! घटगया !! घटगया !!!

प्यारे सज्जन जाति हितैषियो मैंने बहुत परिश्रम और अधिक धन व्ययकर, श्रीमान् पं० रुद्रदत्त जी शर्मा सम्पादकाचार्य्य की परम सहायता, वेदादि सच्छास्त्रों, पुराणों और अनेक माननीय ग्रन्थों के आधार पर " विश्वकर्म वंश निर्णयः " नामक ग्रन्थ निर्माण कर आदि शल्पाचारियों की सन्तान का ब्राह्मणत्व दरसाया है जिसकी युक्ति और प्रमाणों से हारमानकर कट्टर से कट्टर पौराणिकों को उनका ब्राह्मणत्व स्वीकार करने पड़ता है जिसकी प्रशंसा मुक्त कण्ठसे प्रायः अनेक समाचार पत्रों ने की है वही अपूर्वग्रन्थ नवम्बर सन् १६११ तक १।) के स्थान मे ।॥) पर विक्रय होगा * निर्धनी और विद्यार्थियों को केवल डाक व्यय देने मात्र पर भेजा जावेगा जिन भद्र पुरुषों को उक्त ग्रन्थ के दर्शन की इच्छा और जाति हित हो वह निम्न पतेपर शुद्धाक्षरों में पत्र व्योहार करें।

शिवनारायण झा

पल्टन, नम्बर, ६ जाट, एल, आई

ताड़बन्द सिकन्दराबाद दक्षिण

---

* नोट—पत्रपर किसी सभा या समाज के प्रधान, वा मंत्री महाशय, तथा स्कूल के प्रथमा ध्यापक जी के हस्ताक्षर होनेसे प्रर्थना पत्र स्वीकार किया जावेगा अन्यथा नहीं।

जाति से रु० १०) वसूल पाये है

धन्यवाद ।



प्यारे भ्रातृगण इस बार मेरे पास धन की न्यूनता हो जाने और के एक ऐसे ही कारणों के उपस्थित होने के कारण यह "शीतल सन्ताप हरण" नामक पुस्तक बहुत ही विलम्ब से प्रकाशित हुआ जिसका मुझे महान् शोक है। मुझे तो अबभी इसके प्रकाशित होने की पूर्ण आशा न थी परन्तु कोटिशः धन्यवाद है उस करुणा वरुणालय परमात्मा को है कि जिसकी महती कृपा से श्रीमान् पण्डित भगवान दत्त जी झा तथा श्रीमान् पण्डित शालिग्राम जी झा का ध्यान इस ओर आकृष्ट हुआ और आप महानुभावों ने इस पुस्तक को प्रकाशित करने की इच्छा प्रकटकी और वह शनैः२ ऐसी दृढ़ होती गई कि आपने ५०) रु० भेज इस यज्ञ को आरम्भ ही करा दिया जिसके लिये हमही नहीं किन्तु सम्पूर्ण जातिबान्धवों को आपका कृतज्ञ होना चाहिये और वारम्बार उन जाति हितैषियों को धन्यवाद देना चाहिये कि जिन्हों ने जाति के गौरव की रक्षा के निमित्त उपर्युक्त दोनों महानुभावों की प्रेरणा करने पर आपकी धन से सहायता की श्रीमान पं० सुन्दरलाल जी रेलवे वर्क शौप झांसी भी धन्यवाद के पात्र हैं कि जिन्होंने इस यज्ञ की पूर्त्ति के लिये १०) मुद्रा अर्पण किए ५०० प्रतियां चन्दे से प्रकाशित हुई हैं शेष ५०० श्रीमान् पण्डित छेदालालजी शर्म्मा फर्रुखाबाद निवासी ने निज धनसे प्रकाशित कराई हैं जिसे आप मूल्य पर विक्रय करेंगे। प्रमाणों के लिखने में श्रीमान् पण्डित रामनारायण जी झा के सुयोग्य पुत्र "यमुना प्रसाद" जी ने जिस की आयु इससमय केवल १५ वर्ष की है जो लोवर मेट्रीक्यूलेशन कक्षा में विद्याध्ययन करता है सहायता दी है परमात्मन् बालकी चिर आयु करैं क्योंकि बालक होनहार प्रतीत होता है। वैदिक प्रमाणों के संग्रहीत लेख की कापी करने में श्रीमान् पण्डित अयोध्या प्रसाद जी झा ने बड़े परिश्रम से कार्य्य किया है जिस हेतु धन्यवाद के पात्र हैं आप सीधे सादे धार्मिक महानुभाव हैं।

सर्वजाति हितैषियों का

सेवक शिवनारायण झा

धन्यवाद।

प्यारे पाठको भाषा प्रेमियों में वह कौन है जो श्रीमान् "ठाकुर गदाधर सिंह जी" भाषा भूषण के सुनाम से अपरिचित होगा। आपने "चीन में तेरहमास" "रूस और जापान युद्ध" "तिलक यात्रा आदि २ पुस्तकें निर्माण कर भाषा साहित्य की जो सेवा की है उसकी कदरतो विद्वान् ही जानते हैं। निःसन्देह भाषा प्रेमियों को आपने वह लाभ पहुंचाया है जिसके लिए हमें चिरकाल तक आप का ऋणी रहना पड़ेगा। उन्हीं प्रशंसित महानुभाव ने अरुचि होने पर भी इस पुस्तक के ३ फरमों का प्रूफ देखा है। जिस के लिए हम बहुत कृतज्ञ हैं और बारम्बार आपके इस अमूल्य समयदान के लिए धन्यवाद देते हैं।

आपका वही प्राचीन
सुहृद
शिवनरायण झा



भूमिका

नास्य श्लाघामकलित गुणां पोषयन् प्रीतयेनः । कोन्धै श्चित्रस्तुति शत विधौ शिल्पिनः स्यात् प्रकर्षः ॥ निन्दामेव प्रथयतु जनः किन्तु दोषान्निरूप्य । प्रेक्षास्तस्य स्खलित वचनं प्रीणये देवभूयः ॥

चिरकाल से मैं वृद्ध महात्माओं के मुख से यह बात सुना करता था कि मैनपुरी, इटावा और फतहगढ़ आदि कतिपय नगरों में जो शिल्पी लोग निवास करते हैं वह वास्तव में मिथिला देश से आये हुए ब्राह्मण हैं परन्तु शिल्पकार्य्य करनेके कारण इस प्रान्त के निवासी उनको बढ़ई कहने लगे हैं, इसके निर्णयार्थ मैंने जब उक्त शिल्पी जनों के गोत्र प्रवर और वेद तथा शाखादिका पता लगाया तो अन्य ब्राह्मणों से एक विशेष बात इनमें पाई गई जिसे मूलग्राम कहते हैं ऐसे ही अन्यान्य कुछ बातें इनमें ऐसी मिलीं दूसरी ब्राह्मण जातियों में प्रचलित नहीं हैं इसके अनन्तर मैं कई एक मैथिल महानुभावों से मिला और उनकी वंश परम्परागत पदवियां पूंछीं तो वही मूलग्रामादि विषयक उत्तर मिले तब तो मुझे निश्चय हो गया कि उक्त वृद्ध जनों के कथन वास्तव में सत्य हैं कि मैनपुर्य्यादि नगरों के शिल्पी मैथिल ब्राह्मण हैं इसके अन्तर मैंने संस्कृत ग्रन्थों का अवलोकन करना आरम्भ किया जिसका प्रतिफल "विश्वकर्मवंश-निर्णय" नामक पुस्तक में दिखला चुका हूं ।

इस पुस्तक के अवलोकन से सहस्रों सार ग्राही सज्जनों को सन्तोष प्राप्त हुआ परन्तु कतिपय दुराग्रही मनुष्यों को उस पुस्तक के पढ़ने से ईर्षावश कुछ असन्तोष भी हुआ क्योंकि पात्र भेद से प्रत्येक वस्तु के फल में भेद हो जाता है जैसा महात्मा भर्तृहरि जी ने लिखा है ।

"सन्तप्रायसिसंस्थितस्य पयसो नामापिन श्रूयते।
मुक्ताकारतयातदेव नलिनी पत्रस्थितं राजते ॥

पाठक वृन्द ! ऐसेही ईर्षी महाशयों में से श्री पं० शीतल प्रसाद ठाकुर भी हैं जिन्होंने एक मुद्रित विज्ञापन वितीर्ण करके अपनी हृदयस्थ अग्नि के धूम को जगत् के चर्म्म चक्षुओं में भर कर अन्धकार का प्रचार करने की चेष्टा की है, पाठकों के अवलोक नार्थ ठाकुर जी के विज्ञापन को यहां मैं उद्धृत किये देता हूं जिससे उसकी निस्सारता सबको ज्ञात हो जाय।

क्या खाती (बढ़ई), लुहार आदि मैथिल ब्राह्मण हैं !

"मैथिल ब्राह्मण सभा मैनपुरी का द्वितीय वार्षिकोत्सव" शीर्षक एक विज्ञापन आज अकस्मात् ही प्राप्त हुआ। "मैथिल ब्राह्मण सभा यह शब्द देखकर प्रथम तो आश्चर्य्य सा हुआकि दर्भंगा के केन्द्रस्थल मधुबनी में अभी तो मैथिल ब्राह्मण सभा हुई ही थी, पुनः इतनी शीघ्र ही यह दूसरी सभा कैसी ! परन्तु इन शब्दों के आगे "मैनपुरी का द्वितीय वार्षिकोत्सव" यह शब्द देखकर सब भ्रम दूर हो गया। गतवर्ष होने वाले प्रथम वार्षिकोत्सव के विषय बंगबासी का निम्न लेख स्मरण हो आया:—

हिन्दी बङ्गवासी ता० ९ अगस्त १९०९ का क्रोड़पत्र ॥

युक्त प्रदेश मैनपुरी गत २५, २६ वीं जुलाई को यहां की बढ़ई जाति के कितने लोगों ने मिल कर स्वजातिनिर्णय कराने के लिये जलसा किया, उसमें भारतधर्म्ममहामण्डल के महोपदेशक शास्त्री दुर्गादत्त विद्यारत्न तथा पण्डित बाबूरामजी पधारे थे। आर्य्यसमाज * की ओर से अपने को मैथिली ओझा बताने वाले उपदेशक शिवनारायणजी भी आये थे।

* जाति बखेड़े में पड़ना आर्य्यसमाज का सिद्धान्त नहीं है, न शिवनारायण जी आ० स० के उपदेशक ही हैं, यह मैथिली ओझा भी नहीं यह तो मैनपुरी आदिक के मैथिलमन्यमानो में से ही है ॥

समाज के उपदेशक ने साबित किया कि बढ़ई विश्वकर्मा के सन्तान और मैथिल गौड़ ब्राह्मण हैं। "इसके बाद सनातनी पंडितों ने बड़ी युक्ति और प्रमाणों द्वारा उनका खण्डन अच्छी तरह किया बाद स्मृतियों के प्रमाणों से सिद्ध किया कि बढ़ई वर्णसंकर अनलोमज हैं। वे ब्राह्मण सिद्ध नहीं हो सके। इसके बाद पंडितों का निर्णय सर्व साधारण को सुनाया गया"। टीकाराम

यह तो बड़े हर्ष की बात है, भारतवर्ष के उन्नति प्राप्त करने का लक्षण है कि हमारे देश के शिल्पकारों में भी अपने को विद्या से अलंकृत करने की चेष्टा उत्पन्न हुई है, परन्तु विश्वकर्मा महर्षि थे, हम उनकी सन्तान हैं, अतः मैथिल ब्राह्मण हैं, इस प्रकार अपने को मैथिल ब्राह्मण सिद्ध करने के ढकोसलेबाजी से क्या लाभ सोचा जा रहा है।

प्रथम तो विश्वकर्मा मैथिल ही नहीं थे, द्वितीय जब मनु भगवान ने " त्वष्टिस्त्वायोगवस्य च " १०। ४८॥ काष्ठ कर्म आयोगव वर्ण का कर्म निर्धारित किया तब यह सिद्ध नहीं कि विश्वकर्मा के कुल प्रसूत काष्ठ लोह कर्म्म करने वाले ही हुए। यदि क्षणमात्र के लिये यह दोनों ही बात मान ली जावें कि विश्वकर्मा मैथिल थे और उनकी सन्तान ने भी काष्ठ कर्म ही किया और यह लोक में मैथिल अब तक प्रसिद्ध हैं जैसा विश्वकर्मवंश-निर्णय में पृष्ठ १७९ पर कहा गया है तो मिथिला देशस्थ ब्राह्मणों में न्याय, व्याकरण के पांडित्य के स्थानमें शिल्प पाण्डित्य ही पाया जाना चाहिये तथा मिथिला के यावत् लुहार बढ़ई आदि शिल्पकार हैं वे ब्राह्मण ही माने जाने चाहियें, परन्तु ऐसा न होकर वह शूद्र ही माने जाते हैं। अपरञ्च खाती लुहार आदि स्वमन्तव्यानुसार ही विश्वकर्मवंशी भी नहीं ठहरते। क्योंकि विश्वकर्मवंश निर्णय में पृष्ठ २४३ पर कहा गया है "हमारा वंश विश्वकर्मा के किसी अवतार विशेष से नहीं चला है। जब विश्वकर्मा देवर्षि अवस्था में स्वर्ग में थे यह वंश तब चला है'

वि० वं० नि० में पृष्ठ ५ पर कही हुई वंश चलने की वीर्य और क्षेत्रप्रधान दोनो ही रीतियों से यह निराली और सृष्टिक्रम विरुद्ध रीति है। ऐसी अवस्था में विज्ञापन आदिकों में "प्यारे सज्जन जाति हितैषियो? कहिये जाति की वर्तमान स्थिति किस भद्र पुरुष से छिपी हुई है जिसने महाराज मिथिलानरेश ऐसे धार्मिक और महानुभाव के हृदय को कम्पायमान कर अनेक चिन्ताओं का भंडार बनाया है, जिसने सहस्रों संस्कृतज्ञ पंडितों को अनेक कष्टों को सहन कराते हुए होलिकोत्सव पर मधुवनी दर्भङ्गा में एकत्र किया और जिस जातीय दशा ने उनके स्वच्छ विचारों को समस्त जाति-हितैषियों के समक्ष प्रकट कराया, कहां तक कहैं मिथिलानरेश का अपने व्याख्यान में आपकी जातीय दशा पर शोक प्रकट कर ......" इस प्रकार श्रीमान् मिथिलेश तथा समस्त मैथिल समुदाय को लपेट कर उनको लुहार बढ़ई आदि प्रसिद्ध कर उनका क्यों उपहास किया जाता है। विश्वकर्म्म वं० नि० में पृष्ठ १७९ पर जो यह कहा गया है "इस में अधिक प्रमाण देने की आवश्यकता नहीं जान पड़ती कि मुख्य शिल्पकार मैथिल ब्राह्मण हैं" क्या यह मैथिलों की परम्परागत मानमर्यादा को कलंकित करना नहीं है? क्या यह श्रेष्ठ मैथिलों के लिये (Insulting mockery) उपहास मिश्रित मानहानि का अपराध नहीं है। मैथिलीय प्रचीन गौरव को पुनरुज्जीवित करने के लिये, मैथिलीय कीर्ति को दिगन्तव्यापी बनाने के लिये जो (Conference) महासभा आदिक का निर्माण किया जा रहा है, क्या यह उसके उद्देश्य प्राप्ति में बाधक नहीं होगा। मिथिला में आज दिवस अंग्रेज़ों के प्रचार निमित्त उद्योग हो रहा है, अंग्रेजी पढ़े लिखे मनुष्यों में देशीय परिधान आदि का स्वतः अभाव हो जाता है। जब इस प्रान्त में "मैथिल" शब्द खाती शब्द का पर्य्याय-वाची हुआ जाता है तो देशी परिधान छोड़े हुए अंग्रेज़ी शिक्षाप्राप्त नवीन आकांक्षा परिपूरित हृदय विद्या धन प्राप्त्यर्थ देश विदेश भ्रमणार्थ निकले हुए मैथिल ब्राह्मणों को अपने को मैथिल बतलाने से ब्राह्मण

मनवाना कष्टसाध्य हो जायगा। मैथिल पंडित बड़े आदर और श्रद्धा से मिथिला का नाम लेते हैं यदि इस विषय का अनुसन्धान कर इन खाती लुहार आदिकों का अपने को मैथिल कहना न रोका गया तो मिथिला का गौरव नष्ट हो मैथिल शब्द हास्यास्पद हो जायगा। मैथिल महासभा (Conference) संगठन हो गया है। मैथिल समुदाय में श्री ५ मान् मिथिलेश, आनरेबिल राजकुमार श्रीमान् कीर्त्यानन्दसिंह बहादुर आदि महानुभावों के होते हुए यह कुछ कठिन कार्य नहीं है जब श्रीमानों ने दिन २ भर रात्रि को बारह २ बजे तक बैठने का परिश्रम किया तो मैथिलीय कीर्ति की रक्षार्थ इस विषय को हाथ में लेना भी उनका परमकर्त्तव्य है उनके ऐसा करने से मैथिलों का विदेश में अर्थात् श्री काशीजी से पश्चिम मैथिल बतलाने से खाती लुहार समझा जाना बंद हो जायगा।

मैथिलउपहास्यदुखित—

शीतलप्रशाद, ठाकुर.

दर्भङ्गा प्रान्तान्तर्गत

कमतौल, निवासी।

पूर्वोद्धृत विज्ञापन की उस की निस्सारता को पाठक स्वयम् ही समझगये होंगे तौ भी स्पष्टार्थ मैं भी कुछ निवेदनकरता हूं।

प्रथम ठाकुर जी ने विज्ञापन के शीर्षक लिखने में ही वाक छल किया है यदि कोई महाशय ऐसा विज्ञापन दें कि " क्या ठाकुर ब्राह्मण हैं" तो इसको देखते ही सहस्रों मनुष्य चौंक उठेंगे और कहने लगेंगे कि ठाकुर कदापि ब्राह्मण नहीं होसक्ते बरन ठाकुर क्षत्रियों को कहते हैं बस इसी प्रकार से भोले लोगों को भड़काने के वास्ते पं॰शीतलप्रसाद जी ने विज्ञापन के आरम्भ में खाती और बढ़ई आदि शब्द लिखे हैं आगे आप लिखते हैं कि "मैथिल ब्राह्मण सभा" यह शब्द देखकर आश्चर्य हुआ" क्यों ठाकुर जी आश्चर्य क्यों हुआ जब उस में स्पष्ट मैनपुरी और द्वितीय शब्द लिखे हुए हैं तब आपको भ्रम क्यों हुआ, क्या दर्भंगा और मैनपुरी एवम् प्रथम और द्वितीय शब्दों में एकता वा समता देखकर आप को भ्रम और आश्चर्य हुआ वा और कोई बात है अजी ठाकुर जी हमारे विज्ञापन में तो

कोई आश्चर्य्य की बात ही नहीं थी, हां हां बात हुआ आप "मैथिल और ब्राह्मण" शब्दों को देखकर ही चकित हुए होंगे यदि यही बात है तो आपके आश्चर्य्य और निवारण करनेके वास्ते मैंने फिर इस पुस्तिका की रचना की है जिसमें वेद, वेदाङ्ग और पुराणादि आपके माननीय ग्रन्थों के प्रमाण पूर्ण रीति से भरे हुए हैं आशा है कि इस के पाठ से आप के वास्तविक शीतल हृदय में शीतलता का सञ्चार हो जायगा और जो अभिमानादि से उष्णता आगयी थी वह निवृत्त होजायगी जैसाकि महाकवि कालिदास जी ने लिखा है ।

उष्णत्वमग्न्यातपसं प्रयोगात् ।
शैत्यं हियत्सा प्रकृति र्जलस्य ॥

परन्तु आपने जो हिन्दी बङ्गवासी के प्रमाण से लिखा है कि "बढ़ई जाति के कितने लोगों ने मिलकर स्वजाति निर्णय कराने के लिये जलसा किया उस में भारत धर्म्म महामण्डल के महोपदेशक *** पधारे थे आर्य्यसमाज की ओर से अपने को मैथिल ओझा बताने वाले उपदेशक शिवनारायणजी भी आये थे" इत्यादि यह सबही बातें मिथ्या हैं प्रथम तो बढ़ई कोई वर्ण वा जाति नहीं है बरन वह एक पेशा है जिस प्रकार से ज़मीन्दारी जिस को मिथिला देश (तिर्हुत) में रहने वाले सैकड़ों मैथिल करते हैं क्या उनकी सभा को आप ज़मीन्दार सभा कहते हैं यदि ज़मीन्दार सभा नहीं कहते तो शिल्पी जनों की सभा पर आक्षेप क्यों करते हैं, और भी आपने मिथ्या लिखकर पब्लिक की आंखों में धूल झोंकने की चेष्टा की है अर्थात् मुझे आर्य्यसमाज का उपदेशक बतलाया है, ठाकुरजी मैं किसी समाज का उपदेशक नहीं हूं, न मैंने बढ़इयों को ब्राह्मण सिद्ध किया था बरन सदासे ब्राह्मण हैं उनका ही ब्राह्मण कहा था न मेरे कथन का उस सभा में किसी ने खण्डन न उस सभा में किसीने अनुलोमज प्रतिलोमज का नाम ही लियाथा भला जो सनातनी पण्डित दक्षिणा लेने को ही पधारे थे वह गाली क्यों देते, क्योंकि इस सभामें नतो ब्राह्मण क्षत्रिय—बनाने का काम था और न किसी और को ही कुछ बनाना वा बिगाड़ना था बरन

जो सदाके ब्राह्मण हैं उनकी ही हां हांमें मिलाना थी और वैसाही सनातनी पण्डितों ने कियाभी था अतएव शीतल प्रसाद ठाकुरजी का उद्धृत किया वङ्गबासी का लेख सर्वथा मिथ्या है।

अब रहगयी मैथिलत्व की बात उसमें प्रथम यह बतलाइये कि मैथिल शब्दको आप रूढ़ी मानते हैं वा यौगिक मानते हैं अथवा योगरूढ़ी मानते हैं। " मिथिलायां भवो मैथिलः " यदि इस व्युत्पत्ति से आप मैथिलामें उत्पन्न हुए सबको ही मैथिल कहते हैं तो सबही ब्राह्मणेतर जातियां इसपदवी की वाच्य होजायँगी, यदि ब्राह्मणमात्र में रूढ़ी समझते हैं तो जबलपुर और काशी आदिमें जिन मैथिलोंके जन्म हुए हैं उनको मैथिल न कहना चाहिये यदि वंश परम्परा से मानते हैं तो मैनपूरीस्थ शिल्पीओं की वंश परम्परा को बिनादेखे आपका उपालम्भ सर्वथा मिथ्या है और मिथिलादेशस्थ ब्राह्मणेतर जातियों का दृष्टान्त देना भी प्रौढ़ी बाद है।

अब सिद्ध होगया कि हमलोगों का ब्राह्मणत्व वेदादि सच्छास्त्रों के प्रमाणसे और मैथिलत्व कुलक्रमागत पदबियों तथा वंश परम्परा से सूर्य्यवत् स्वयम् सिद्ध और प्रकाशित है जैसा कि इस पुस्तकमें प्रकाशित किया जायगा आशा है कि इस पुस्तक को पढ़के श्रीमान् पण्डित शीतल प्रसाद ठाकुरजी अपने हृदयको शीतल करलेंगे और सारग्राही विद्वान् इसे देखकर अवश्य सन्तुष्ट होंगे यही समस्त अन्तिम प्रार्थना है।

कार बदी १०वीं रविवार
संवत् वि० १९६८

वास्तविक विद्वज्जनीकङ्कर
झोपनामक शिवनारायण

इसके पश्चात् मैं सनातनधर्म्म सभाके उस लेख को प्रकाशित किये देता हूं जो उन्होने स्वयम् प्रकाशित किया था और जिस्से बङ्गबासी का पूर्वोक्त लेख और पं० शीतलप्रसाद ठाकुरजी का सारा विज्ञापन मिथ्या सिद्ध हो जायगा।

———

सनातन धर्म प्रचारक मण्डल अमृतसर का एक अज़ीबकाम व उपदेश कान का ।

दौरा मैनपुरी ॥

सनातन धर्म प्रचारक मण्डल अमृतसर के लायक़ उपदेशक पं० गौरी शङ्कर जी व महाशय राम प्रसाद मए मनेजर प्रचारक मण्डलके लिए तैयारी कररहे थे कियोंकि वहां सनातनधर्मी दुनियां के लिए एक जबरदस्त इम्तहान था लेकिन स्टेशन पहुंचने पर रेल निकल गई दूसरी ट्रेन करतार पुर गई २३ जौलाई की शाम को पं० गौरी शङ्कर व एडीटर सनान धर्म प्रचारक का व्याख्यान सनातन धर्म के तअल्लुक़ हुआ जिसका पूरा असर पड़ा दूसरे दिन २४ जौलाई को दो पहर के १२ बजे से दो बजे तक दोनों असहाब का व्याख्यान सिलसिलेवार हुआ मण्डल के लिये अपील की गई जिसपर मबलिग २४ रुपय नगद वसूल हुये चूंकि हमने मनपुरी जरूर जानाथा इस लिये लोगो के इश्तयाक़ बढ़ने पर भी की मण्डी में लेक्चर दिया जावे न ठहर सके और वायदह किया कि फिर किसी वक़्त आप लोगों का दर्शन किया जावेगा इस काम केलिये हम लाला दयाल दास शा: का अज़ाहद शुक्रिया अदा करते हैं कि जिन्हा ने अलावह हमारी खातिर तवज़ेह की मण्डल की इमदाद के लिये बहुत कोशिस की अनकरीब उन कोशिसों का नतीजा ज़ाहिर किया जावेगा करतारपुर से इक्के में सवार होकर कोई साढ़े चार बजे के करीब जालन्धर स्टेशन पर पहुंचे तब ४½ बजे कलकत्ते मेल से सवार होकर २५ जौलाई को सुवह के ६½ बजे मैन पुरी पहुंचे हमारे एक दिन लेट होने की वजह से मनपुरी दोस्तों में हलचल हो रही थी वारे हमे देखते ही शान्ति हुई वाक़यात यों बयान किये जा सकते हैं कि मैनपुरी की एक जमात नें जो के आम लोगों के खयाल में बढ़ई हैं और जो डंके की चोट से अपने आप को

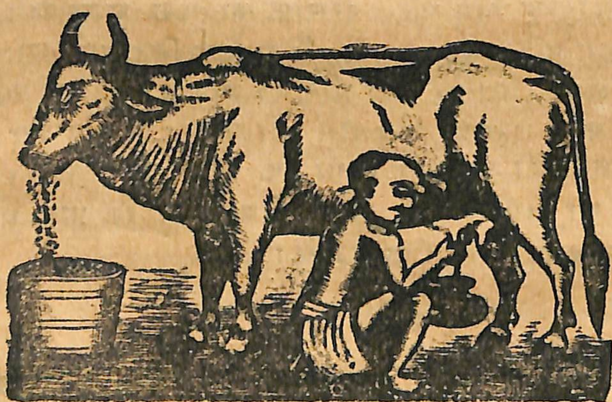
ब्राह्मण खान दान से साबित करते हैं इस तरक्क़ी के ज़माने में अपनी असलियत ज़ाहिर करने के लिये एक सभा क़ायम की जिस का जलसा मुक़र्र करके हमें निमन्त्रण दिया गया जिसके मुताबिक़ हम वहां पहुंच गए थे पण्डित बाबू राम महोपदेशक व पण्डित दुर्गा प्रसाद विन्द्राबनी हमसे पहिले वहां पहुंच गएथे हमें जाते ही मालूम हुआ कि इन्सानी चक्कर के हलके में आकर हर दो पंडित साहबान ने कोई साफ़ लेकचर नहीं दिया बलकि गोल मोल बात कहीं जिस का मक़सद हम नहीं कहसकते कि क्या था ख़ैर हम को इससे क्या मतलब कलयुग महाराज ही की कृपा है कि इन्सान अपने मतलब के लिये दूसरों के लिहाज़ व दबाब से सदाक़त का ख़ून कर डालता है कि जिस से आख़िरकार उसे पछताना पड़ता है क़िस्सा कोतः २५ जौलाई को सब से पहिले महाशय शिवनारायण जी झांसी निवासी ने (जिस के कुल ख़यालात से हम इत्तफ़ाक़ नहीं रखते) क़रीबन दो घन्टे एक ज़बरदस्त प्रमाणों सहित व्याख्यान देकर अपनी असलियत व दावे को साबित किया हम नहीं कह सकते कि इन प्रमाणों की असलियत क्या है ताहम पं० बाबूराम व पं० दुर्गाप्रसाद जी के लेकचरों पर शिवनारायण साहिब का रिव्यू ज़बरदस्त था आप के लेकचर के असर को देख कर ताअस्सुब में मुबतिला अशखास ने बहुत विघ्न डाले और बिचारे शिवनारायण को मायूसी के आलम में ले जाना चाहा लेकिन सदाक़त के आगे पेश नगई इस लिये हम शिवनारायण साहिब की मुस्तक़िल मिज़ाजी वा धर्म भाव की तारीफ़ किये वग़ैर नहीं रह सकते हैं आज लेकचर हमारा था और तमाम सभा सदों की आखें हमारी तरफ़ लगी हुई थीं लेकिन ना वाक़िफ़ों के दिलों में जहालत की वजह से न मालूम क्यों खटका लगा हुआ था कि जिस से उनको हमारा उठना इतना नागवार मालूम होता था कि गोया हमारी बारूद उनके बनावटी क़िले को नेस्त नाबूद कर डालेगी और उन के दावों को तोड़ फोड़ सदाक़त का डंका बजा देवेगा सभा तो यही चाहती है कि हमारा लेकचर हो और वो लोग जिन को सभा से कोई ज़्यादा ताल्लुक़ नथा ग़ोग़ा मचाते कि पं० बाबू राम साहिब व पं० दुर्गाप्रसाद साहिब

का लेकचर हो हालां कि यह कह दिया गया कि कल दोनों साहिबों का व्याख्यान हो चुका है लेकिन वाहरे हट व तअस्सुब सभा वालों के खिलाफ़ पं० बाबू राम सा० व पं० दुर्गाप्रसाद जी को उठाया दोनों साहिबों ने इन लोगों पर खूब दिल्लगियां उड़ाईं परमात्मा जानता है कि उस वक्त हमारा दिल इन लोगों के तरीक़े को देखकर सख्त पेच तावकर रहा था ये इन्ही की महरबानी का नतीजा है, हिन्दू आज गुलाम होरहेहैं और सैकड़ों मुसलमान, ईसाई, आर्य्य, हो रहे हैं यह सच जानना चाहिये कि अगर इस जमात में धर्म भाव न होता तो आज अपने भाइयों व उपदेशकों के नाजायज़ वरताव को देखकर ईसाई या आर्य्य समाजी तो ज़रूर ही हो जाते इसी असना में एक वकील सा० ने (जिस का नाम नामी बाबू गङ्गा प्रसाद जी) अपने इन्साफ़ पै जिन से तक़रीर की इस तक़रीर को सुनकर हमारा दिल निहायत ही खुश हुआ आपने जिस अक़्लमन्दी व सचाई से इन लोगों के तअल्लुक़ अपनी राय ज़ाहिर करते हुये तरक़्क़ी की तजा वीज़ बतलाईं आफ़रीं कहने को दिल चाहता है ऐसे २ लायक़ फायक़ तजरवे कार मुस्तक़िल मिज़ाज मुल्क व कौम के खैर ख्वाह जमाने के नशेब व फराज को जनाने वाले महात्माओं ही के वजूद से हिन्दू कौम जिन्दह परमात्मा शाहिद है कि आप के ज़बरदस्त ताअस्सुब से मुबर्रा व्याख्यान दें जो मायूसी कि छा रही थी शान्ति की सूरत में तबदील की फ़र्माया कि बढ़ई एक पेशा है न कि जाति है और अगर कोई ब्राह्मण जूतों की दूकान करके बूट वग़ैरः फ़रोख्त करे तो वह ब्राह्मण जाती से है अगर कोई ब्राह्मण घड़ियों को फ़रोख्त करे तो वह वाच सेलर कहलाता है अगर कोई और काम करे तो कारपेन्टर हो जाता है पेशों के अदल बदल से जाति में कोई भी फर्क़ नहीं आसकता पस ऐ भाइयों आप अपनी तरक़्क़ी चाहते हैं तो तालीम हासिल करो और सनअत व हिरफत को तरक़्क़ी दो इन बखेड़ों में क्या पड़ा है तुमको कोई भी असली असलियत से नहीं गिरा सकता तब बहुत से लोगों के इसरार पर हम उठे और हमने बाबू साहिब ही के खयालात को ज़ोरदार अलफ़ाज़ों में ताईद की।

जिससे शान्ती मुजस्सिम सूरत में आंखों के सामने आगई और उन भाइयों का दिल खुशी में फूला न समाया हम ने कहा कि किसी फैसले को एकदम दे देना बड़ा मुशकिल है इस लिये हम माकूल सबूत के साथ अपना फैसला दे देंगे लेकिन इसमें शक नहीं है कि पेशों के बदल जाने से जाति नहीं बदलती जाति वह है जो जन्म से मरण पर्यन्त कायम रहती है पस तहक़ीक़ात की जावेगी कि सच्चाई हमको किस तरफ लेजाती ब्राह्मण बनना मुशकिल है विश्वामित्र जैसे तपश्वी तप करते करते उस मरहले के अन्दर मुश्किलसे जाने लायक हुए लेकिन अगर एक हीरा कीचड़में गिर पड़े और मुद्दततक कीचड़ में रहे तब भी वो हीरा है अगर एक शख्स गफ़लत की वजह से सो जावे और कोई दूसरा उसके घर का मालिक हो जावे लेकिन बेदार होजाने पर वो ज़रूर मालिक हो सकता है इस इन्साफ़ को लेकर इन लोगों के मुताल्लिक़ तहक़ीक़ात से अपनी रायदेनी चाहिये न कि गुस्से में आकर उन को चिड़ाया जावे जिस से न सिर्फ़ हिन्दू क़ौम बलिक इन्साफ़ को एक धक्का लगे कि कि का फल हम पहिले ही भुगत रहे हैं आख़िर निहायत खुशी के साथ आज का जलसा सामप्त हुआ और २६ जौलाई के लिये व्याख्यानों की बाबत कहा गया पं० बाबू राम जी व पं० दुर्गाप्रसाद जी ने सभा से जाने की इजाज़त मांगी कि हमने दो दिन का वायदा किया था सो हांगये सभा सदों ने बड़े प्रेम से फ़रमाया कि वाक़ई आप खुशी से तशरीफ़ लेजावे।

२६ जौलाई सुबह ८ बजे से १०½ बजे तक महाशय शिवनारायण जी का व्याख्यान शुरू हुआ इतना हम ज़रूर कहेंगे और मुअद्दबान इलतमास करेंगे के अगर आप अपनी क़ौम की तर्क्क़ी चाहते हैं तो दयानन्दी ज़हरीले असर से खुद बचें और अपनी क़ौम को बचावें तब तो कोई आप की तरफ़ आंख भर के भी नहीं देख सकते बरन अगर दयानन्दी ख़यालात को लेकर महर्षि मनु के श्लोकों को बनावटी ख़याल करोगे तो खुद बनावटी होते हुये क़तई गिरजाओगे पस अपने सनातन धर्म के मुताबिक़ ब्राह्मण पन

दिखाओ यह तक़रीर २घंटे की अपने ढंग के लिये लिहाज़ से उमदा थी और असर डाल रही थी और हमें निहायत ख़ुशी है कि तरह २ की मायूसियों के सामने आने पर भी आपने धीरज व शान्ती को हाथ से जाने नहीं दिया तक़रीर का ख़ासा असर पड़ा पाठशाला के लिये अपील की गई और ख़ासी रक़म जमा होगई है और माहवारी चन्दा भी लिखा गया तमाम भाइयों के दिल ख़ुशी में फूले न समाते थे दरअसल महाशय शिवनारायण को अपनी प्यारी क़ौम से मायूसी जो थी वो काफ़ूर की तरह उड़गई ।



ओ३म्

शीतल सन्ताप हरण

॥ प्रथम भाग ॥

इन्द्रः समत्सु यजमान मार्य्यं प्रावद् विश्वेषु शतमूति राजिषु स्वर्मीढ़ेष्वाजिषु। मनवे शासद् व्रतान् त्वचं कृष्णामरन्धयत्। धक्षन्न विश्वं त तृषाण मोषति न्यर्श सानमोषति। ऋ०।१३०।८॥

(प्र०) एक विज्ञापन आज अकस्मात् ही प्राप्त हुआ।

(उ०) अकस्मात् कैसे प्राप्त हुआ? क्या किसी शाकिनी डाकिनी के मन्त्र प्रयोग से या वायु के उड़ाकर पहुंचाने से या स्वयम् उड़ कर (आपके दर्शनार्थ) मिथिला पहुंचने से। अच्छा यह तो आज ही पता लगा कि आपके यहां इन्हीं उपर्युक्त साधनों द्वारा वस्तुएं पहुंचतीं हैं। शावाश! महाशय!! फिर विज्ञापन ही क्यों तब तो और भी सैकड़ों वस्तुएं पहुंचती रहती होंगी!!! यदि नहीं तो विज्ञापन के अकस्मात् पहुंचने और अन्यों के न पहुंचने का क्या प्रमाण आप रखते हैं। अब इन चालों से कार्य्य न चलेगा साफ २ कहिये कि हमारे किसी मित्र ने इस कहावत के अनुसार "* हे बहू तू मों सी हुइये" डाक द्वारा विज्ञापन पहुंचाने की कृपा की और आप को इस ब्रह्मकुल पर आक्रमण करने के लिये उकसाया। कहिये ऐसेही है न?

---

*एक विधवाके सधवाने पैरछुए तब विधवा आशीर्वाद देतीहै कि हे "बहू तू मोसी हुइये"

(प्र०) "मैथिल ब्राह्मण सभा" यह शब्द देख कर प्रथम तो आश्चर्यसा हुआ

(उ०) महाशय प्रथम तो आप का उपर्युक्त लेख ही व्याकरणानुसार अशुद्ध है द्वितीय इसमें आश्चर्य्य की कोई बात भी नहीं दीखती क्योंकि एक सभा के उत्सव हो जाने से क्या सम्पूर्ण सभाओं के उत्सव हो जाते हैं या एक सभा के उत्सव मनाने के पश्चात् अन्य सभाओं का उत्सव मनाना कहीं वर्जनीय निन्दित या पाप कर्म कहा गया है जब नहीं किन्तु प्रत्येक सभा का उत्सव मनाना परम कर्त्तव्य है। इस से सिद्ध हुआ कि आप को सभा समाजों का किञ्चित् मात्र ज्ञान नहीं है क्योंकि यदि होता तो ऐसे आश्चर्य रूप अज्ञान के जन्म दाता कदापि न बनते "मधुवनी" में होने वाली सभा "महासभा" के नाम से प्रसिद्ध हुई है "महा" शब्द ही अन्य सभाओं के जन्म का उत्तर दाता है अर्थात् अन्य सभाओं की विद्यमानता मे वह सभा "महा सभा" नाम से स्मरण की जा सकती है अन्यथा नहीं तो जब तक अवयव रूप सभा में पुष्ट न होंगी तब तक अंग रूप "महा सभा" कैसे पुष्ट हो सकती है इसी लिये प्रत्येक अवयव रूप सभा को उत्सव रूपी भोजन से पुष्ट करने की अत्यावश्यकता है प्रियवर क्या हो आपका उपर्युक्त लेख ही आपका वैरी निकला कि जिसने आप के चञ्चल स्वरूप की पूर्ण साक्षी दे "असमीक्ष्य न कर्तव्यं कर्तव्यं सुसमीक्षितम्,, जो पंडितों का मुख्य स्वरूप है इस महा लक्षण से आप को सर्वथा शून्य बता शास्त्रानुसार आप को पण्डित कहलाने से वर्जित किया।

(प्र०) स्वजाति निर्णय कराने के लिये जलसा किया।

(उ०) यह बात सर्वथा असत्य है क्योंकि मैथिल शिल्पकारों ने गतमनुष्यगणना के समय अपनी जाति "ओझा" ब्राह्मण ही लिखवाई थी (२) आप काशी, प्रयाग, अयोध्या, गया और जगन्नाथपुरी आदि २ तीर्थ स्थानों में पण्डों के दश, बीस वर्ष के नहीं किन्तु पुराने रजिस्ट्रों को जा देखिये। देखियेगा, कि हमारे पूर्वजों ने अपनी अपनी जाति ओझा ब्राह्मण ही लिखवाई है। (३) प्रत्येक वर्ष मृतक श्राद्धों

के समय व विवाह आदि कार्यों में लोग अपने २ गोत्र बतलाते हैं क्या स्वजाति बिना जाने ही गोत्रों को बतलाते और मिलाते हैं (४) प्रथम वर्ष के विज्ञापन ही को अवलोकन करलीजिये उस में साफ़ २ छपा हुआ है कि "मैनपुरीस्थ मैथिलभद्र पुरुषों ने जात्युन्नति पर बिचार करने और उसको उत्तमावस्था पर लाने के लिए एक मेला ता: २५, २६ जौलाई सन् ०१ तदनुसार श्रावण सुदी ८, ९ वीं रविवार, आदित्यवार को करने का विचार स्थिर किया है (५) "मैथिल मार्त्तण्ड" मासिक पत्रका विज्ञापन जो ता: १४-१०-१९०७ सन् में बांटा गया था उक्त पत्रस्थ नाम ही जाति जानने का उत्तम प्रमाण है (६) मैथिल गौड़ वंशावली*, "विश्वकर्म वंश निर्णय:" और "मैथिल नयनामृताञ्जन" प्रकाशित हुए भी कै एक वर्ष व्यतीत होचुकीं थीं मेरे व्याख्यानों को श्रवण कर सभास्थापन का विचार पास हो चुकाथा पाठक महाशय विज्ञापन और पुस्तकों में "मैथिल" शब्द विद्यमान् है अब टीकाराम जी तथा उन के अनुयायी ठाकुर शीतलप्रशाद जी से पूंछिये कि जब हमें जाति ही का बोध नहीं था तब "मैथिल" शब्द कहां से उपर्युक्त पुस्तकों में लिखागया पाठक! अब आप को ज्ञात होगया होगा कि आप कैसी सत्य की मूर्तियां हैं कि जिन्हें असत्य कहते कुछ भी भय नहीं लगता मेरे बिचार में यही उपर्युक्त छः दियेहुए प्रमाण आप लोगों के असत्य कथन को छिन्नभिन्न करने के लिये यथेष्ट हैं अब रही पण्डितों की बात सो यह है कि पं० दुर्गादत्त जी को विज्ञापक ने कै एक उपाधियों से विभूषित किया है यह उन के घर की बात है यदि नहीं तो कृपा पूर्वक बतलावें कि शास्त्री कक्षा में पं० दुर्गादत्त जी कब उत्तीर्ण हुए हैं और विद्यारत्न की उपाधि कहां कब और किस से मिली है जो हो परन्तु इन उपाधियों से विभूषित करने का यह प्रयोजन अवश्य सोचा गया होगा कि साधारण जन इन उपाधियों को देख सुन हमारे भड़काने में आजावेंगे परन्तु शिक्षित समुदाय उपर्युक्त दोनों महानुभावों से जैसा उनका मान भारत धर्म महा मण्डल में है भली भांति जानता और मानता है कहिये सनातन धर्मी, प्रति-

---

* इस पुस्तक को छपे कदाचित २० वर्ष से अधिक समय व्यतीत हुआ होगा

ष्ठित और नामी पण्डितों से ऐसा कौन शिक्षित है जो अपरचित होगा ? हम यहां के एक ऐसे कारणों का वर्णन करना आवश्यक समझते हैं कि जिससे विपक्षियोंके असत्य कथन का परिचय स्वयम् हो जावेगा पाठक महानुभाव विचारिये कि प्रथम तो "भारतधर्म महा मण्डल" ने जाति निर्णय करने कराने का अधिकार दर्शित पण्डितों के हस्तगत करने और उनकी दी हुई व्यवस्था को महा मण्डल की अंगीकृत होने का विचार भी आज तक प्रगट नहीं किया है तब बतलाइये कि इनसे व्यवस्था लेने की क्या आवश्यकता थी ? क्योंकि सब ही जानते हैं कि ऐसे व्यवस्था पत्र माननीय नहीं होते हैं। (२) वेदादि सच्छास्त्र और सभी माननीय ग्रन्थ एक मुख हो हमारे ब्राह्मणत्व का प्रतिपादन कर रहे हैं कि जिनसे कुछ प्रमाणों का संग्रह "विश्वकर्म वंश निर्णयः" में किया गया है क्या उससे अधिक और प्राप्त व्यवस्थापत्र से और भी कोई व्यवस्थापत्र हो सकता है नहीं कदापि नहीं। (३) काशी के बड़े नामी २ पण्डितों अन्य प्रान्तों के बड़े विद्वान पुरुषों रईसों और राजा महाराजों का व्यवस्था पत्र "विश्व ब्रह्म कुलोत्साह" नामक ग्रन्थ में प्रकाशित हो चुका है जिस में "श्री काशीस्थ विद्वज्जानावास सम्मति पत्रम" नामक व्यवस्था पत्र जिसकी प्राप्ति का समय उपर्युक्त ग्रन्थो में श्रावण शुक्ला २ विक्रमी संवत् १८४५ बतलाया गया है जिसे आज १२२ वां वर्ष व्यतीत हो रहा है जो २१ बड़े २ धुरन्धर संस्कृतज्ञ पण्डित शास्त्रियों के हस्ताक्षरों से सुशोभित है, विश्वकर्म वंशियों को प्राप्त था जो उनके ब्राह्मणत्व मान और मर्यादा का भले प्रकार रक्षक है। जैसा कि " वि. क. वं. नि " से प्रतिपादन कर चुके हैं कि सर्व विश्वकर्म वंशीय एक वर्णस्थ नहीं हैं परन्तु भिन्न २ कार्य्यों के करने पर भी सब आदि शिल्पी उस व्यवस्था पत्र के अधिकारी अवश्य हैं पाठक यदि आपकी इच्छा हुई और सम्पूर्ण व्यय आपने सहन करना स्वीकार किया तो हम उस व्यस्था पत्र को भाषाभाष्य सहित अलग मुद्रित करासकेंगे। महाशय ! अब आप उपर्युक्त बातों को पढ़ या सुन कर जानगये होंगे कि हमारे विपक्षियों ने कहां तक असत्य भाषण करने का बीड़ा उठा हमे बदनाम करने का ढोंग रचा है।

(प्र०) आर्य्य समाज की ओर से अपने को मैथिल ओझा बतलाने वाले उपदेशक शिवनरायण जी भी आये थे।

(उ०) क्या खूब आप को अवश्य मेव मालूम होगा कि आर्य्य समाज के पास कैसे बड़े २ योग्य विद्वान् वैतनिक, अवैतनिक, साधु और सन्यासी, उपदेश और शास्त्रार्थ करने के लिए हर समय उपस्थित रहते हैं उनकी विद्यमानता मे " मैं " जो इनदिनों किसी समाज का सभासद भी नहीं हूं और न उपदेश का कार्य्य ही करता हूं समाज ने मुझे स्वीकार कर उत्सव पर भेजा ? क्या समाज को इस " सभा " से कोई सम्बन्ध था ? अगर था तो किस समाज को ? या सम्पूर्ण आर्य्य समाजों को क्या अपनी ही इच्छा से समाज ने हस्ताक्षेप करना चाहा था या सभाके सभासदों की सम्मति से ? यदि कहैं अपनी इच्छा से तो सरासर असत्य है क्योंकि जातीय कार्य्यों में हस्तक्षेप करना समाज का सिद्धान्त नहीं है यह आप स्वीकृत कर चुके हैं यदि कहैं सभासदों की सम्मति से तो भी ठीक नहीं है क्योंकि यदि सभासदों को समाज से प्रेम होता तो वार २ सनातनी विद्वान् पण्डितों को कष्ट पहुंचाने की कदापि आवश्यकता न होती, इस विषय में विशेष तर्क करना भी उचित नहीं जान पड़ता क्यों कि "ठाकुर" जी स्वीकार कर चुके हैं कि "जातीय बखेड़े में पड़ना आर्य्यसमाज का सिद्धांत नहीं है प्रियवर जब कि समाज का उपर्युक्त सिद्धांत ही नहीं है तब ऐसा कहना कि "आर्य्य समाज की ओर से अपने को मैथिल ओझा बतलाने वाले उपदेशक शिव० जी भी आयेथे" कितना गप्प है। सच है "भूत वही जो शिर चढ़ बोले" यहां तो टीकाराम जी ने "मैथिल ओझा" शब्दों को लिख अपने उपर्युक्त कथन (जाति निर्णय कराने वाले लेख को) स्वयम् असत्य ठहराया है और "ठाकुर" जी अपने मान्यवर टीकाराम जी के *असत्य भाषण का वर्णन अपने विज्ञापन में प्रकाशित किया है उन में से पहिला हम इसको कहते हैं और दूसरे को नीचे प्रकाशित करते हैं टी० रा० जी "मुझे" समाज का उपदेशक बतलाते हैं परन्तु ठाकुर जी कहते हैं कि "शिव०

*जाति बखेड़े में पड़ना जब कि आर्य्य समाज का सिद्धान्त नहीं है तब "आर्य्य समाज की ओर से" ऐसा कहना सरासर असत्य है ॥

किसी समाज के उपदेशक नहीं हैं जैसा मुझे भी स्वीकृत है अस्तु महाशय जिन टी० रा० जी को उपर्युक्त मोटी २ बातों काभी बोधनहीं है वह पण्डितों के भाषण और वेदादि सच्छास्त्रों के प्रमाणों को क्या समझ सकते हैं जिनने असत्य भाषण करना ही अपना परम कर्त्तव्य मान रक्खा है कहिये उनके पीछे चल "ठाकुर" जी अपना और जगत का क्या कल्याण कर सकेंगे मुझे अति आश्चर्य हुआ कि टी० रा० जी को इतना असत्य भाषी जानते हुए भी "ठाकुर" जी ने उनकी शरणागति कैसे स्वीकार की परन्तु जब तनिक विचार दृष्टि से इस बात को देखने लगे तब पुरानी कहावत तुरन्त स्मरण पड़ गई जिससे सब भ्रम नष्ट होगया।

"कुनद हम जिन्स बाहम जिन्स पर वाज"।
कबूतर बा कबूतर बाज़ बा बाज़
पानी से पानी मिले, मिले कीच में कीच॥
नीच निचाई नहिं तजै, जौं पावत सत्संत।
तुलसी चन्दन विटप बसि, बिष नहिं तजत भुजंग॥

पाठक अब तो आप टी० रा० जी की चालों से परचित हो गये होंगे हम विशेष न कह उपसंहार में अपने दोनों मित्रों को यह सम्मति देते हैं कि आप अपना मनुष्य जीवन परस्पर के विरोध में व्यतीत कर कुछ प्राप्त न कर सकेंगे उचित है कि इन झगड़ों को तिलाञ्जली दे शुद्ध वैदिक धर्म की सेवा में लग जावें तब आप का और देश का कल्याण होगा क्योंकि दुनिया कुए जैसी शब्द वाली है जो आपने कहे वेही दुहराये गये आप यह न समझें कि मैं विद्वान् हूं यहां भी *प्रतिज्ञा कर चुके हैं जिसे यावत्-जीवन पालन करना अपना कर्त्तव्य समझते हैं बतलाया जाता है कि आप अपने घरेलू मामलों में समाज को कलंकित करने का यत्न

* मैथिल नयनामृताञ्जन का उपोदघात देखिये।

न करें क्योंकि समाज ऐसी विशाल शक्ति सम्पन्न संस्थाओं से टक्कर लेने योग्य आपका माथा नहीं दीखता है।

(प्र०) इसके बाद सनातनी परिडतों ने बड़ी युक्ति और प्रमाणों द्वारा उनका खरडन अच्छी तरह किया।

(उ०) क्या खूब एक नशुद दो शुद उलटा चोर कुतवाल को बांधे महाशय जी हमारे प्रमाणों के श्रवण करते ही आपके परिडतों के होश उखड़ गए थे उनकी जैसी कुछ अवस्था हो रही थी उनका अन्तःकरण ही जानता होगा आप उस बात को छिपाने का कितना ही यत्न करें पर पवलिक जो अपने कानों सुनचुकीहै आप के असत्य कथन को कैसे विश्वास करसकती है जिस समम मैंने सहस्रों पुरुषों के सन्मुख यज्ञोपवीत पकड़ यह प्रतिज्ञा की थी कि यदि परिडतों ने विद्याध्यपन कर आर्ष ग्रन्थों के बिचारने में कुछ समय लगाया है तो मुझ से शास्त्रार्थ कर यह निश्चय करादें कि यह जाति आपके कथनानुसार द्विज होते हुए भी ब्राह्मण नहीं हैं तो मैं इसी समय यज्ञोपवीत उतार द्विज ही नहीं किन्तु शूद्र बनजावूंगा यदि सिद्ध न कर सकें तौ हमारा दावा वहाल रहा इसपर विघ्नडाल बगलैं झाकने के अतिरिक्त और कुछ भी न करसके यदि कुछभी दम था तौशास्त्रार्थ के लिए आगे बढ़े होते वहां तौ भाग २ की पड़ रही थी जब वेकरारी ने ज्यादा दाव लगाई तव वेचारोंने उसी समय बहुत विवादके पश्चात् मन्त्री सभा से अपनी बिदाई की प्रार्थना कह सुनाई जो बहुत विवाद के पश्चात् स्वीकृत हो गई। अस्तु हमने सभा मराडप मे अन्य परिडतों के व्याख्यानों की समाप्ति पर उसी समय पवलिक मे ऐलान करदिया था कि पं०दु०द० तथा पं०वा०रा० जी के व्याख्यान की समालोचना कल प्रभात के ७ बजे से करैंगे प्रार्थना है कि वेद तथा शास्त्रों के प्रमाणों को श्रवण कर आप लोग लाभ उठावेंगे पंडितों ने अनुलोमज या प्रतिलोमज शब्द तो इस समुदाय के लिये नहीं उच्चारण किये थे किन्तु हां जिस समुदाय के आप उपदेशक नियत होकर आये थे और जिसने अपनी अनुलोमजता को स्वयम् अपने विज्ञापन द्वारा स्वीकार कर लिया है उसी समुदाय के लिये कहे थे कि जिनसे हमारा कुछ प्रयोजन नहीं था परन्तु दोनों समुदायों का एक ही कार्य

होने तथा एकही पिण्डाल में उत्सव मनाने के कारण सर्व साधारण में उलटे विचारों का फैलना सम्भव समझ पंडितों के असत्य कथन का प्रबल युक्ति और प्रमाणों द्वारा खण्डन किया गया महाशय मदनमोहनलाल ने अपने विज्ञापन को हमारी सभा के दो योग्य महानुभावों के सुनाम पर प्रकाशित करा दिया था जिसकी असत्यता को सहस्त्रों पुरुषों के सन्मुख दरसाया गया महानुभावों ने कथन किया कि हमारे जाली हस्ताक्षर बनाये गये हैं अन्यथा दिखलाया जावे कि हमारे हस्ताक्षर मूल प्रति पर कहां हैं हम इस विषय को न्यायालय तक पहुंचावेंगे इसपर चहुंओर से क्षमाकरो २ यह ध्वनि आने लगी अन्तमें बहुत समझाने बुझाने पर उन्हें क्षमा दी गई पंडितों ने सहस्त्रों पुरुषों के सन्मुख हमारे समुदाय के लिये वह तो नहीं किन्तु यह कथन अवश्य किया था कि यह लोग "द्विज" हैं पर यह नहीं कहते थे कि "द्विजों" मे अमुक वर्णस्थ हैं स्वयम् अपनी प्रशन्सा करना भद्र पुरुषों का कर्त्तव्य नहीं इस लिये हम सत्य के प्रकाशार्थ सनातन धर्म प्रचारक का एक लेख पुस्तक के अन्त में उद्धृत करते हैं । महाशय टी० रा० जी ! हमारे कथन का खण्डन पण्डितों ने स्वगृह में चुपचाप ही किया होगा और केवल आप ही को सुनाया होगा क्योंकि दूसरे दिवस तो पंडितों ने दर्शन ही नहीं दिये थे तब फैसला कैसा परन्तु आप लिखते हैं कि पंडितों का फैसला सुनाया गया इससे हमारे उपर्युक्त "घर" की बात स्वयं सिद्ध हो जाती है और आप के पूर्व लेख की असत्यता स्वयम अपने रूप को प्रकाशित कर देती है सत्य है "सांच को आंच" नहीं भले मानसों कुछ तो सोच समझ कर लेखनी उठाया करो।

(प्र०) बढ़ई वर्ण सङ्कर अनुलोमज हैं।

(उ०) आप का कथन ही बतला रहा है कि आजतक आप को आर्ष ग्रन्थों के पढ़ने और मनन करने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ और न आजतक किसी विद्वान् पण्डित की सत्सङ्गति काही शुभावसर मिला है क्योंकि यदि इन दोनों बातों में से एक भी आप को प्राप्त होती तो आकाश पाताल के कुलावे मिलाने का कदापि साहस न हुआ होता भला "टी० रा०" जी बतलाइये तो सही कि

आप कौन जाति हैं क्योंकि मुझे भ्रम है कि वेद मन्त्र जो कि मैं प्रमाण में उपस्थित करना चाहता हूं किसी अनधिकारी के कर्ण गत न होजावें क्योंकि सनातन धर्म का सिद्धान्त है ! कि यदि कोई शूद्र वेद वाक्य सुनता है ?? तो शीशा गलाकर उस के कान में डालना चाहिये!!! पर आज वह समय तो नहीं दिखाई पड़ता है आज दिन तो महाशक्ति सम्पन्न बृटिश सरकार का सुराज्य वर्त्तमान है किस की मा ने धौंसा खाया है कि जो ऐसे घृणित पाप कर्म करने का साहस भी कर सके हमे खेद से कहना पड़ता है कि आप के नवीन शिष्य ठाकुर शीतल प्र० जी सनातनधर्मी होने का दमभरते हुए भी आप को बग़ैर जाने बूझे कैसे गुरु बना बैठे और किस आधार पर "स्त्री शूद्रौ नाधीयता मिति श्रुति" का अपमान किया जिस से उनके सनातनी होने का पूर्णतया पतालग गया है और आर्य्य न होना तो उनके लेख से ही सिद्ध है प्रथम तो मै आपही से अपरिचितथा दूसरे ठाकुर जी की दुरङ्गी ने सब रंग भङ्ग करडाला जो हो हम तो ऋषि दयानन्द जी के कथन को कि वेद अर्थात् ईश्वरीय ज्ञान मनुष्य मात्र के लिए है निर्भ्रान्त जानते और मानते हैं इसलिए एक वेद मन्त्र प्रमाण में उपस्थित करते हैं जिसे सम्पूर्ण शिखा सूत्र धारियों का मानना ही परम कर्त्तव्य है क्योंकि जो नहीं मानता वह उपर्युक्त संज्ञा का कदापि किसी अवस्था में अधिकारी नहीं हो सकता है क्योंकि शास्त्र का वचन है कि "नास्तिको वेद निन्दकः" आप पं० तु. द. जी तथा पं० वा. रा. जी को ही क्यों विश्वके सर्म्पूण पण्डितों को अपनी सहायता के लिए क्यों न बुलावें दूसरे विश्वभर के पुस्तकालयों से संग्रह कर बढ़ई को आयोगव, अनुलोमज, प्रतिलोमज और शूद्राऽदि सिद्ध करने के लिए चाहे कितने ही प्रमाण क्यों न इकट्ठे करलें पर वह कुछ भी नहीं हैं क्योंकि सम्पूर्ण ऋषि महर्षियों का यही अटल सिद्धान्त है कि "वेद प्रणि हितो धर्मः अधर्मस्तद्विपर्य्ययः" इस लिए वेद तथा वेदानुकुल मानना ही हमारा परम कर्त्तव्य है यदि हां है तो मैदान साफ़ होगया यदि नहीं है तो नास्तिकों से हमारा कुछ प्रयोजन नहीं है देखना है कि उपर्य्युक्त बचनों में से आप किस के अनुयायी बनते हैं वेदत्यागादि पापों के लिये प्रायश्चित्त कराना भी धर्म शास्त्रों का सिद्धान्त है कहिये आर्य्य तथा हिन्दुओं

में वह कौन है जो वेद वाक्य के सन्मुख आप के कथन को स्वीकार करने के लिए तय्यार होगा? लीजिये हम दावे से कहते हैं कि आज तक उपर्युक्त नाम धारियों में से कोई न जन्मा था न जन्मा है और जन्मेगा जो तक्षक या रथकार को वर्ण सङ्कर कहने के लिए अपना मुख खोल सके। महाशय यह तुच्छ आक्रमण क्या आप चाहे कितने ही बड़े से बड़े भयङ्कर आक्रमण क्यों न कर देखिये हम कहते हैं जब तक वेद रूपी खड्ग हाथ में उपस्थित है तब तक शत्रु का अधिकार नहीं कि हमारे दुर्ग का बाल भी बांका कर सके ऐ! शिल्पकारो निम्न वेद मन्त्र को स्वर्णाक्षरों में मुद्रित करा द्वार २ लटकाइये जिस से लोग अपनी भूलों को समझ इस महा नीच कार्य्य से हाथ उठावें वा आप के द्रोहियों का हृदय आपको गौरव समपन्न समझ सदैव सन्तुष्ट होता रहे। परमात्मा कहते हैं कि मैने यजुर्वेद में यह उपदेश किया है।

"प्रमदे कुमारी पुत्रं मेधायै रथकारं-धैर्य्याय तक्षाणम्" अ० ३० मं० ६।

अर्थ—प्रमाद करने में प्रवृत हुए (कुमारी पुत्रं) बिवाह से पहिले व्यभिचार से उत्पन्न हुए कन्या के पुत्र वर्णसंकर को दूर कीजिये (मेधायै) अनेक अनुभव किये विषयों का स्मरण रखनेवाली बुद्धि के लिये (रथकारम) कारीगरी से बनने वाले रथ आदि पदार्थों को बनाने वाले पुरुष को परमेश्वर उत्पन्न करे। यह भाषार्थ पं० भीमसेन शर्मा सनातनी कृत है कृपया उपर्युक्त मन्त्र और भाष्य पर विचार कर लीजिये जब वर्णसंकर की उत्पत्ति का निषेध है तब यदि लकड़ी का कर्म करना वर्णसंकर, अनुलोमज, प्रतिलोमज, और शूद्रादि का कर्म होता तो तक्षाओं की उत्पत्ति की प्रार्थना कदापि वेदमन्त्र में न होती और नमेधा बुद्धि से युक्त होने की याञ्चा की जाती मेधाबुद्धि से युक्त तो ऋषि मुनि ही हुआ करते हैं। यदि अब भी कुछ विद्या बुद्धि का गर्व है तो हमारे प्रमाणों का खण्डन प्रकाशित करिये अन्यथा बे स्वर का राग आलापना सज्जनों का कर्त्तव्य नहीं हम आप की शास्त्र पारदर्शिता का वर्णन तो ऊपर दो चार टूटे फूटे शब्दों में कर

आये हैं अब उसकी पुष्टि में नीचे कुछ लेख प्रकाशित करते हैं। महाशय जी आप शिल्पकारों को अनुलोमज प्रतिलोमज, और शूद्रादि जो इच्छा चाहे कह अपने मन के फफोले फोड़ कुछ देर भले ही सुखानुभव कर लीजिये परन्तु जिस समय अपने मान्य ग्रन्थ पुराणों की आलोचना करियेगा तब मुख उज्जल करना कठिन हो जावेगा पुराणों की विद्यमानता में इतनी ढिठाई क्यों ! आपतो तक्षाओं को निन्दित ठहराने के लिये उन्हें उपर्युक्त अपशब्दों से स्मरण करते हैं परन्तु निश्चय जानिये कि सनातनधर्म तो अनुलोमजों प्रतिलोमजों का गृह ही है जिसके अधिकारी आप बने बैठे हैं। पुराण के पढ़ने वालों को मालूम है कि बड़े २ विद्वान्, पंडित, ज्ञानी, ध्यानी और ऋषि आदि जिनके वंशज होने का गौरव आपको प्राप्त हैं वे अनुलोमज प्रतिलोमज वंशजों में से अनेकों को दूर से आते देखते ही आसन छोड़ खड़े हो जाते थे उन के पधारते ही साष्टांग दंडवत् कर माथा नमाय हाथ जोड़ हाथ पकड़ उन्हें उच्चासन पर बिठलाय आप नीचे उनके चरण धोय चरणामृत ले अपना जीवन सफल मानते थे परन्तु हाय ! आज कैसा अन्धेर है कि उनकी सन्तान आज उसी नामसे दूसरों को निन्दित करने का बिचार करती है। महाशय जी ! बीरता और बहादुरी तौ तब है जब आज ही से अनुलोमज प्रतिलोमजों को तिलाञ्जली देदी जावे और प्रकाशित किया जावे कि जो उपर्युक्त नामधारियों को आज से पूजन करेंगे वे भी आज से अनुलोमज, प्रतिलोमज समझे जावेंगे आप यह नवीन व्यवस्था प्रकाशित तौ करदीजिये पुनः जिसे जोभावेगा सो तौ करता ही रहैगा क्योंकि नेत्रवालों का धर्म नेत्रहीनों को मार्ग बतलाना अवश्य है लीजिये मैं प्रथम तौ मिथिला देश वासी श्रीमान् विद्वद्वर्य्य पण्डित शिवशङ्कर जी शर्मा काव्यतीर्थ की "श्रीकृष्ण मीमांसा" से नीचे कुछ लेख उद्धृत करता हूं जिससे आप उपर्युक्त नामधारियों से परिचित होजावेंगे और रही सही एक दूसरे इतिहास से जिसे मैं वर्णन करूंगा अवश्य पूर्ण हो जावेगी। "शशि गुरु तियगामी" एक समय चन्द्रमाने अपने परम पूज्य गुरू ब्रहस्पति की पत्नी "तारा" को बलात्कार हरण कर उसके पतिव्रत को भग्न किया धर्म शास्त्रों में गुरु पत्नी के साथ कुव्यवहार करना महा पातक में

गिना गया है। इसी महापाप से "बुध" की उत्पति हुई श्रीमद्भागवत ६—१४में देखिये एक समय मनुजी ने गुरु वसिष्ठजी को बुलाकर पुत्रेष्टि अथात् जिससे पुत्र हो ऐसा यज्ञ करने के लिये निवेदन किया। वसिष्ठजी के यज्ञ करने से पुत्र तो नहुआ किन्तु एक पुत्री हुई जिसका नाम "इला" रक्खा गया! पश्चात् मनुजी को असन्तुष्ट देख तपस्या के बलसे उसी कन्या को वसिष्ठजीने* पुत्र बना दिया। और तब से वह सुद्युम्न कहलाने लगा। कभी वह कुमार बहुतसी सेना लेकर बनों में शिकार करता हुआ सुमेरु पर्वत के नीचे महादेव के स्थान में जापहुंचा वहां जाते ही वह सुद्युम्न तो एक सुन्दरी युवती बन गया और इसके साथी संगी भी स्त्रियां हो गये। यह दशा देख लज्जित हो अपने मित्र दोस्तों को भी समझा बुझा वहां ही रहने लगा। इसकाल में वही चन्द्रमा का पुत्र बुध वहां पहुंच उस युवती कन्या के साथ प्रेम लगा बिहार करने लगा। इससे पुरूरवापुत्र उत्पन्न हुआ फिर कभी मनुजी को स्मरण आया और गुरूजी को बुलाकर पूंछा कि भगवन् मेरा पुत्र सुद्युम्न कहां चला गया कृपाकर पता लगाइये। वसिष्ट जी ने ध्यानाव स्थित हो देखा तो मालूम हुआ कि वहतो स्त्री होकर एक पुत्र भी उत्पन्न कर चुका है। वसिष्टजी वहां पहुंचे और महादेवजी को प्रसन्न किया। शिव जी बोले कि आप जानते ही हैं कि इस स्थान में आया हुआ पुरुष स्त्री बनजाता है। एवमस्तु आपने मुझे प्रसन्न किया है अतः यह राजकुमार अबसे ***एकमासपुरुष और एकमासस्त्री रहा करेगा** इस प्रकार सुद्युम्न पुनः राजधानी में आया। परन्तु ऐसे स्त्री पुरुषरूपधारी राजा से प्रजाएं असन्तुष्ट रहा करती थीं। अतः पुरूरवा को राज्य देकर सुद्युम्न बनको चला गया किन्तु उस अवस्था में भी सुद्युम्न विवाहा गया और उससे उत्कल, गय और विमल तीन पुत्र उत्पन्न हुए। उस पुरूरवा का प्रेम स्वर्ग की वेश्या और शापग्रस्ता उर्वशी से हुआ। इस के ६ पुत्र हुए। इन में से एक का

---

*कहिये ठाकुर साहब यही तो आपका सृष्टि क्रम हैन !!!

* कहिए यह विचित्र सृष्टिक्रमही आपका सृष्टिक्रम हैन !

नाम आयु था इससे नहुष राजा हुआ। इसको देवगण ने स्वर्ग का राजा बनाया। परन्तु इस कामी ने पतिव्रता इन्द्राणी को भ्रष्ट करना चाहा अतः ऋषियों के शाप से वह अजगर सांप हो गया। इसके भी ६ पुत्र हुए। इन में एक ययाति था। ययाति यद्यपि क्षत्रिय था तथापि किसी कारणवश ब्राह्मण शुक्रने अपनी देवयानी नामकी कन्या को ययाति के साथ ब्याह दिया और असुर राजा वृषपर्वा की कन्या शर्मिष्ठा भी दासी बनकर देवयानी के साथ रहा करती थी। शुक्र जीने ययाति को खूब डांटडपट कर चिता दिया था यदि तू इस मेरी कन्या की दासी शर्मिष्ठा के साथ व्यभिचार करेगा तो मैं तुझे दण्ड दूंगा। इसने न माना देवयानी से यदु, तुर्वसु २ और शर्मिष्ठा से द्रुह्यु, अनु और पुरू तीन पुत्र उत्पन्न हुए। तब ज्ञात होने पर शुक्र ने इसको शाप दिया कि तू आज से बुड्ढा होजा यह शुक्र के पैरपर गिर कर गिड़गिड़ाने लगा कि मैं अभी तक काम से तृप्त नहीं हुआ हूं आप कृपाकीजिये। प्रसन्न होकर शुक्र ने कहा कि तुम अपनी वृद्धावस्था किसी पुत्र को देकर और उसकी युवावस्था लेकर भोगविलास कर सकते हो। ययाति ने यदु तुर्वसु आदि सब पुत्रों से युवावस्था मांगी किन्तु किसी ने नहीं दी तब कनिष्ट पुत्र पुरू अपने पिता की आज्ञामान, वृद्धावस्था ले परमवृद्ध बन गया और ययाति पुत्र की यौवन से भोग विलास करने लगा इसी ययाति के पुत्र यदु के वंश में श्रीकृष्ण चन्द्र का अवतार हुआ अतः यदुनन्दन कहे जाते हैं। ये सब कथाएं भागवत नवम स्कन्ध में विद्यमान हैं (२) कहते हैं कि राजा "उपरिचर" के पूज्य पिता ने उन्हें उस दिवस कि जिस दिन उनकी "गिरिका" नाम्नी भार्य्या ऋतुस्नाता थी उन्हें आखेट करने के लिए अरण्य जाने की आज्ञा दी। राजा ने पिता के बचनों को परम धर्म समझ बनका मार्ग लिया। परन्तु स्त्री का स्मरण रखने के कारण बन मे ही उनका वीर्य्य स्वलित हुआ। राजा ने इस विचार से कि वीर्य्य वृथा न जावे एक वट पत्र का दोना बना उस में वीर्य्य को रख एक बाज को बुला यह उपदेश कर कि यह वीर्य्य अवश्य मेव पुत्रोत्पत्ति में कृतकार्य्य होगा। इसे मेरी प्रिया गिरिका नाम्नी भार्य्या के पास लेजा। बाज स्वामी की आज्ञा पाते ही उस वीर्य्य युक्त दोने को

लेकर आकाश मार्ग से उड़ता हुआ। उसे कुछ लिये हुए देख अन्य बाजों ने इस विचार से कि मांस लिये जाता है छीनने के लिये उस का पीछा किया वह स्वामिभक्त बाज पुत्रोत्पत्ति का महोपदेश स्वयम् राजा से श्रवण करचुका था दौना को सहज क्यों देने लगा था इस लिये युद्ध की ठन गई और घोर युद्ध होते ही दोना यमुना मे जागिरा उस वीर्य को "अद्रिका" जो शापवस मत्स्यरूप मे वहां उपस्थित थी खागई कुछ काल पश्चात् जब मछुए ने पकड़ उसे चीरा तब उसके एक बालक और एक बालिका १ *उत्पन्न हुए वह उन्हे राजा उपरिचर के पास लेगया राजाने बालक को अपने रूप का देख रखलिया जो राजा मत्स्य के नामसे प्रसिद्ध हुआ और कन्या उसी को देदी गई वह उसे अपने गृह लेआया और उसका पालन पोषण करने लगा जब वह बड़ी हुई तब वह उसे यमुना पर लेगया वह वहीं नौका पर रहती और यात्रियों को जो उस मार्ग से उतरते थे उतारा करती थी एक दिन का कथन है कि महर्षि पाराशर जी का वहां शुभागमन होगया वह कन्या को सर्वाङ्ग सुन्दर मोहिनी मूर्ति को देख ऐसे मोहित हुए कि उससे उसी समय भोग की अभिलाषा प्रकट की जब वह महर्षिके कहने सुनने समझाने बुझाने पर सहमत न हुई तब आप ने "शाप" का लटका उड़ाया श्रवण करते ही बेचारी गिड़गिड़ा कर कहने लगी कि भगवन् मुझे क्षमा करें मैं आप की आज्ञा पालन मे तत्पर हूं पर देखिये तो सही दिन है लोग देख कर क्या कहैंगे यह सुनते ही ऋषि ने तुरन्त कुहरा उत्पन्न किया और आप भारत के प्रसिद्ध विद्वान् वेदादि सच्छास्त्रों की मूर्ति २ * पुराणों के आविष्कार कर्त्ता की सृष्टि रचने मे प्रवृत्त हुए इस संयोग से जो बालक उत्पन्न हुआ उसका नाम "व्यास" है और यही मत्स्यगंधा नाम्नी स्त्री पश्चात् सत्यवती नामसे प्रसिद्ध हुई जोकि महाराज सन्तनु की स्त्री थी श्री वेदव्यास

---

१ * ठाकुरजी "मछली से लडका और लडकी पैदा हुए" कहिये यही आप का सृष्टि क्रम है न ?

२* यद्यपि पुराण व्यासजी के बनाये हुए नहीं हैं परन्तु सम्पूर्ण सनातनी उन्हीं के बनाये हुए हैं ऐसा मानते हैं।

जी जब विद्या पढ़कर निपुण हो गये तब ऋषि, मुनि, योगी, सन्त, महात्मा, ब्राह्मण, त्नत्री, वैश्य और शूद्रादि सब ही को शिक्षा दिया करते थे जिस में प्रतिलोमज सूतजी भी मिश्रित थे यही सूतजी उच्च सिंहासन पर बैठ शौनकादि ऋषियों को कथा सुनाया करते थे एक समय का वर्णन है कि नैमिषारण्य मे जहां सूतजी कथा किया करते थे वलरामजी पधारे सभों ने आपका यथायोग्य सत्कार किया पर प्रतिलोमज सूतजी न तो उठ खड़े हुए और न उन का सत्कार ही किया इस से अप्रसन्न हो वल राम जी ने सूतजी को मारडाला अस्तु वलराम जी की कीहुई हत्या हमारे कथन का मुख्य प्रमाण है अब कहिये महाशय टीका राम जी आपने तो विश्व में वढ़ईयों के निन्दाऽर्थ अनुलोमज प्रतिलोमज बनाया था सो तौ सिद्ध न कर सके और क्या कहें आपको गुरू बना जिन ठाकुर शीतल प्रसाद जी ने लेखनी उठाई है उन्हों ने भी आप और आप के पण्डितों की व्यवस्था को झूठा समझ उन्हें "शूद्र" संज्ञा से सत्कृत किया अब कृपा पूर्वक यह तो कहिये कि आपकी क्या जाति है। जबकि आप के साक्षात् ब्रह्म ने अनुलोमज कुल मे जन्म लिया और अनुलोमज वेद व्यास जी ने ऋषि मुनियों में अपनी श्रेष्ठता उच्चता का नाद बजाया तब आप उनके उपासक हैं उपास्यदेव उपासक से बड़ा ही होता है इसके सिद्ध करने की आवश्यकता क्या! कहिये पुनः कहिये कि हम आपको किस वर्ण का अधिकारी कह स्मरण करें पाठक हम अपनी कोई सम्मति न देते हुए उपर्युक्त दोनों महाशयों की जाति निर्णय का भार आप पर छोड़ते हुए आगे चलते हैं। कहिये यहां तौ खूब ही चारो खाने चित्त गिरे जिस कुए में दूसरे को ढकेलना चाहते थे उस में स्वयम् जा पड़े। महाशय टी० रा० जी आप कहां के निवासी हैं क्या कार्य्य करते हैं पता क्यों न प्रकाशित किया कृपा पूर्वक अवतो पर्दे से बाहर आजाइये क्योंकि आक्रमण और पर्दा दोनों कार्य एक ही साथ नहीं हो सकते हैं। अस्तु जान पड़ता है कि मै कुछ कहते २ भूला जाता हूं आहा ३! याद पड़ गया !! मौके से स्मरण हो आया सनातन धर्म का सिद्धान्त !!! कि " न स्त्री दुष्यति जारेण" महाशय हम पर तौ ऐसे तीक्ष्ण वाणों की वृष्टि न करिये क्योंकि हमारे गुरू

का उपदेश है कि "मातृवत् पर दारेषु" दूसरे हमारी वृद्धावस्था के कारण यह सम्पूर्ण तीक्ष्ण वाण कुंठित हो नीचे गिर पड़ेंगे। आप हैं तो बड़े चालाक पता इस लिये प्रकाशित नहीं किया कि कहीं मान्य हानि का अपराध न चल पड़े परमात्मन् सत्य है कि पापी का हृदय भयातुर अवश्य होता है। मित्र मनुष्यों से जितने भयभीत होते हैं यदि उतना भय उस परम पिता परमात्मन् का करते तो ऐसे पाप कर्म करने के लिये प्रवृत्त नहोते अबभी चेत जाओ और पुनः ऐसे पाप कर्म करने से हाथ उठाओ तभी कल्याण होगा।

(प्र०) यह तो बड़े हर्ष की बात है, भारतवर्ष के उन्नति प्राप्त करने का लक्षण है कि हमारे देश के शिल्प कारों में भी अपने को विद्या से अलङ्कृत करने की चेष्टा उत्पन्न हुई है।

(उ०) हे प्रभु आपकी माया अपार है मेरा वारम्वार नमस्कार है उस महान् शक्ति को जिस के आगे बड़े से बड़े पापियों और महान् शत्रुओं से शत्रु को सहस्त्रों यत्न करने परभी शिरनवा सत्यका प्रकाश करना पड़ता है। ठाकुर जी परमात्मन् आपको प्रसन्न रक्खें निःसन्देह भारतोन्नति का साधन हमारा शिल्प कर्म ही है यही कारण है कि हमारी दयालु सरकार ने अब पाठ प्रणाली के साथ कहीं २ इस कर्म की शिक्षा देनी भी आरम्भ करदी है महाराज बड़ौदा नरेश ने तो इस का जैसा कुछ आन्दोलन किया है वह किसी शिक्षित से छिपा हुआ नहीं है और शिक्षित समुदाय में यह कार्य्य कैसा कुछ अपना गौरव दिखला उन्हें अपने ओर खींचरहा है वह वर्त्तमान समाचार पत्रों के पढ़ने से भले प्रकार प्रकट होजाता है ऐसा होभी क्यों न? क्योंकि अन्य सम्पूर्ण शिल्पों की उन्नति तथा अवनति तक्षा कर्म ही पर निर्भर है यही तो एकमात्र सम्पूर्ण शिल्पों का जनक है! ऐसी महा विद्या जो देश की उन्नति अवनति का मुख्य कारण हो, जो भातवर्ष के जीवन मरण का वर्त्तमान समय में मुख्य प्रश्न बन रहा हो, जिस के प्रचारार्थ यत्रतत्र प्रदर्शिनी कर उस के लाभ सर्वसाधारण को समझाये जाते हों, जिस के अप्रचार के कारण ही अन्य देशवासियों

ने भारतवर्षीयों को पशुसंज्ञा का अधिकारी ठहराया हो जिस दुःख से दुःखित हो पशुसंज्ञा से पृथक् होने के लिये श्रीमान् पण्डित यज्ञेश्वर जीशर्मा ने "आर्य्य विद्या सुधाकर" नामक ग्रन्थ निर्माणकर ठौर २ वेदों के प्रमाण दे "तक्षा कर्म" के महत्व को दिखला और अनेकों प्रमाणों से यह सिद्धकर कि वेदज्ञ लोग शिल्प विद्या के कैसे कुशल होतेथे आदि २ बातों को वर्णन कर मान की रक्षा करते हैं हम पाठकों के अवलोकनार्थ उस से नीचे कुछ लेख उद्धृत करेंगे इस गये गुजरे समय में भी एक * सहस्र ग्रन्थ जिस का मुक्त कण्ठ से यशगान कर रहे हों जिसे वेद यज्ञ नाम से स्मरण करते हों, जिस के अध्ययन का समय चारों वेदों की समाप्ति पर ठहराया गयाहो, के कर्ताओं के लिये अथार्णव धीर, कवि, और विपश्चित् शब्द वेद में विद्यमान् हों उस के संस्थापक को शूद्र कहना सिवा विद्या शत्रु के और कौन हो सकता है पिसे को बार २ क्या पीसाजावे कहां तक पृष्टपेषण करूं यदि आपको कुछ भी आर्ष ग्रन्थों का ज्ञान होता तो ऐसा अनुचित लेख लिखने का कदापि साहस न हुआ होता। हम मे आज ही विद्या का प्रचार नहीं होता किन्तु जिस समय आप के परमात्मा श्रीकृष्णचन्द्र जी जरासंध के आक्रमणों से व्याकुल होरहेथे रक्षा अर्थ उन्हों ने हमारे पूर्वजों से जैसा कुछ भाषण किया वह हमारी विद्वत्ता का सर्वोत्तम प्रमाण है पुष्पक ऐसे बिमानों का निर्माण करना क्या विद्या हीनों का कार्य्य है यदि नहीं तो हमे उपर्युक्त वाक्य कह क्यों उपहास कराया जाता है। सृष्टि की आदि से लेकर आज पर्यन्त हम लोग विद्वान् होते चले आये हैं इस समय में भी कि जिस में आज यह कुल विद्या हीन प्रसिद्ध है कितने ही दारोग़ा, ओवरसियर तहसीलदार, मुन्सिफ़ वकील, बैरिस्टर, आनेररी माजिस्ट्रेट डाक्टर वैद्य, डिप्टी, कलेक्टर, सबजज, एक्सीक्यूटिव इञ्जीनियर, पण्डित और शास्त्री विद्यमान

---

* श्रीमान विद्वद्वर्य्य पण्डित के. वे० शा० से० नारायण राव जी शास्त्री ने उपर्युक्त गणना विश्व ब्रह्म कुल उत्साह नामक ग्रन्थ में प्रकाशित की है और बहुत ग्रन्थों के नाम भी लिखे हैं।

हैं अभी हाल ही में दो महानुभाव जो अंगेरज़ों के पदपर सुशोभित थे पेन्शन प्राप्त कर स्वग्रह आए हैं। "आर्य्य विद्या सुधाकर" प्रकाश १ पृष्ठ १२ में लिखा है।

वर्त्तमान काल भव प्रजाभ्यः संवत्सर शतात् प्राक्तना जना अप्रगल्भा आसन्निति जन श्रुत्युपलम्भादति पुरातन्यः प्रजा विद्या शिल्पाऽऽदि कुशलत्वहीनाः केवलं पशु कल्पा अभूवन्निति निश्चेतुं शक्येत इतिचेन्नैवं प्रमाणाऽ भावात् प्राचीन लोक स्थिते रूप दर्शकेभ्यः सकल प्रमाण वस्तुभ्यः पुरातनत्वेन सर्व सम्मताद्वेद वेद पुस्तकात् तु तदानीन्तनाना मपि जनानां विद्या शिल्पादि कुशलत्वा वगमाच्चा ॥

आगे लिखते हैं। अपि च ऋग्वेदे प्रथमाष्टकस्य द्वितीयेऽध्याये—"तक्षन्ना सत्याभ्यां परिज्मानं सुखं रथमिति" श्रूयते अश्विनी कुमारार्थमृभवः सुखं सुखकारकं परिज्मानं सर्वतःसञ्चरणक्षमं रथं तक्षान्निर्मितवन्त इति तदर्थः"

(प्र०) त्वष्टि स्त्वा योग वस्य च। मनु अ० १० श्लो० ४ काष्ठ कर्म अयोगव वर्ण का काम निंधारित किया।

(उ०) आपने उपर्युक्त अर्थ प्रकाशित कर तक्षाकार्य्य को अयोगव वर्णस्थ का कर्म सिद्ध करने की चेष्टा की है वह सर्वथा निर्मूल है आप ऐसी अयुक्त बातें बना क्या भास्कर को प्रकाश हीन करना चाहते हैं। सो सोचिये तो सही कि इस प्रकाशमय समय में कैसे होसकेगा हम इस श्लोक के अर्थ प्रकाशित करने मे अपनी सम्मति का एक शब्द भी नहीं लिखेंगे इसपर भी यदि आपके पगनडटैं तो ऐसी शास्त्र पार दर्शिता पर बार २ धिक्कार है। लीजिये विचारपूर्वक देख लीजिये, सुन लीजिये, कि श्रीमान् विद्वद्वर्य्य पण्डित तुलसी रामजी स्वामी कि जिन्हों ने सामवेद, उपनिषद् और दर्शनआदि २ ग्रन्थों पर बड़ी योग्यता पूर्ण गम्भीर भावयुक्त टीकाएं प्रकाशित की

हैं वही महानुभाव अपने मनुभाष्य छापा तृतियवार पृष्ठ ३६० पर "त्वष्टिस्त्वा योगवस्य च" का यह अर्थ लिखते हैं "लकड़ी तोड़ना अयोगव का कार्य्य है"। पाठक इस अनर्थ को समझिये ठाकुरजीने लकड़ी तोड़ना जो मनु के बिचारानुसार आयोगव वर्णस्य का कार्य्य है उसके स्थान में "लकड़ी का कार्य्य करना आयोगव वर्ण का कार्य्य है" ऐसा लिखा तक्षाको अयोगव सिद्ध करने के लिए कैसा अयोग्य कार्य्य कर दिखलाया है सच ऊंच और नीच कार्य्यों से ही पहिचाने जाते हैं वैशेषिक दर्शन मे लिखा है "कारण गुण पूर्वक: कार्य्य गुणो दृष्ट:" अर्थात् जो गुण किसी वस्तु के कारण मे होते हैं वे उसके कार्य्यमे अवश्य विद्यमान रहते हैं इस सूत्र से ठाकुर जी के पक्षपात और मलीन हृदयी होने का क्या ही अच्छा प्रमाण हाथ लगता है। हाय यह कैसा समय है कैसी विचरणीय वार्ता है कि लोग इस थोड़े से जीवन पर कैसे २ पाप मय कर्म करते हुए भी किञ्चितमात्र नहीं शर्माते हैं।

पाठक आप यह न समझें कि ठाकुरजी ने किसी व्यक्ति विशेष पर आक्रमण कर उसकी मान हानि का पापमय कर्म किया है किन्तु आपने वढ़ई के कार्य्य करने वालों मात्र को अयोगव बनाया है। ऐ! ब्राह्मण,क्षत्रिय और वैश्य "शिल्पी" कहलाने वाले भद्रपुरुषो होशमे आजावो रही सही लाली इसे भी हाथ से मत खो ऐसा सुन्दर न्याय पूर्ण श्रीमान् महाराजाधिराज पञ्चमजार्ज का सुराज्य पाय अत्यावश्यक है कि यथाशक्ति दानदे प्रान्तीय थोथे विचारों को त्यागते हुए पुष्कलधन एकत्रितकर एक विद्यालय खोलदी जिये जिसमे विद्यापढ़ तुम्हारी सन्ताने पूर्ण विद्वान् बन फैले हुए अन्धकार को छिन्न भिन्न करती हुई विद्या प्राप्त कर गौतम और कणादि के समय का तुम्हे पुनः दर्शन करा संसार मे तुम्हारे अतुलयश को फैलावे। यह कोई कठिन कार्य्य नहीं है हर प्रान्त के शिक्षित एक समुदाय बना मानापमान को तिलाञ्जलीदे ऊंच, नीच कोबिचारों को भुला एक मत हो भिक्षामागने के लिये जहां जिसकी पहुंचहो अपने २ डिपुटेशनों द्वारा धन सङ्ग्रह करना आरम्भ करदें जब कुछ समय मे पुष्कल धनसङ्ग्रह

हो जावे तब ऐसे स्थान पर जहां सभों की सम्मति हो विद्यालय खोलाजावे और उसी समय इसके नियमादि या उससे प्रथम बना-लिये जावें इसमे कार्य्य करनेवाले सच्चे, धर्मानुरागी, जाति हितैषी पुरुषों की आवश्यकता है कार्य्य आरम्भ होने पर मै ऐसे उपाय बतला सकूंगा कि प्रथक खान पान रखते हुए भी हम किन २ नियमों पर चलते हुए अपने अभीष्ट स्थानपर पहुंचसकेंगे क्या हमारे उपर्युक्त दोचार टूटे फूटे शद्व सुनने वालों तक पहुंचसकेंगे परमात्मन् दयाकर कि हमारी आवाज़ वहिरे कानों पर नपड़े।

हमारे अनेक जोशीले मित्रों का विचार है कि सरकार की आज्ञा विरुद्ध वेद और शास्त्रों से विपरीत ठाकुर जी ने किस आधार पर लकड़ी के कार्य्य करने वालों को अयोगव, तथा शूद्र बनाया सन् १८४० से लेकर सन् १९०१ तक २० अभियोग इस प्रकार के मदरास, सुलेमान कोट, त्रिचनापल्ली, वेझवाड़ा आदि २ न्याया-लयों मे हो चुके हैं जिनकी हाई कोर्ट तक अपीलें भी की गई हैं उन सम्पूर्ण न्यायालयों से विश्वकर्मा वंशियों को "ब्राह्मणत्व" का पद प्राप्त हो चुका है एक दो नहीं किन्तु सैकड़ों भद्र पुरुषों और राजा महाराजों के हस्ताक्षर इस कथन की पुष्टि में विद्यमान हैं विपक्षियों को इस विषय मे जैसा नीचा देखने पड़ा है उन्हें वह क्या उनकी सन्तानें भी न भूल सकेंगी, इन अभियोगों में डेढ़ लक्ष से अधिक धन व्यय हुआ है ऐसा अनुमान किया जाता है इन प्रमाणों की विद्यमानता में सम्पूर्ण शिल्पियों को उपर्युक्त कुवाक्य क्यों कहे गये अस्तु उन पर नियमानुसार मान हानि का अभियोग चलाया जाना अत्यावश्यक है। जो महानुभाव इन फैसलों के पढ़ने के अभिलाषी हों वह कृपा पूर्वक मुझे लिखें मै अवकाश मिलने पर अभियोगों का नम्बर तिथि आदि सब आवश्यक बातें कि जिनसे फैसला (Judgement) प्राप्त हो सके लिख भेजूंगा तत्पश्चात् वह उन न्यायालयों को घर बैठे ही अर्जी और फीस भेजदें फैसला प्राप्त हो जावेगा। हम तो ऐसे करने की कदापि सम्मति न देंगे कि ठाकुर जी पर अभियोग चलाया जाय क्योंकि ठाकुर जी भी हमारे भाई हैं यदि उन्हों ने अपनी अज्ञानता वस कुवाक्य कह

दिये और आपने उन्हें क्षमा दान से सत्कृत न कर न्यायालय पहुंचाया तो आपकी क्या उदारता रही आपकी यह क्षमा उन्हें बार २ विचार करने का समय देगी और एक न एक दिन वह अपनी इस भूल पर स्वयम् पश्चात्ताप कर विसूर २ कर रोवेंगे, मित्रो समय बतला रहा है कि अब विरोध करने का जमाना नहीं रहा धैर्य्य धारण करो परमात्मन् सब कामना पूर्ण करेंगे मुझे तो वही विद्यालय सम्बन्धी प्रस्ताव स्वीकृत है कि जिसकी अपील ऊपर दोचार टूटे फूटे शब्दों में की गई है। अब हम इस विषय को यहीं छोड़ते हुए अपने असली दावेपर आते हैं। कहिए पाठक! जिन्हें लकड़ी तोड़ना और लकड़ी का कार्य्य करना कि जिन में आकाश पाताल का अन्तर है एकही कार्य्य दिखलाई देता हो विचारिये तो सही कि आप कैसे विचारवान, ज्ञानमान होंगे हमारे पास प्रमाणों का इतना संग्रह है कि "सत्यार्थ प्रकाश" ऐसी आकार वाली पुस्तक केवल मूल मात्र से पूर्ण हो सकती है परन्तु हम उन प्रमाणों में से देने के पूर्व चाहते हैं कि प्रथम मनु सेही ठाकुर जी के दिये हुए भाष्य की असत्यता दिखावें तत्पश्चात कुछ प्रमाण उपस्थित करेंगे जिस से ठाकुर जी का ओछापन और हमारे कथन की सत्यता सन्सार पर प्रकट हो जावे गी। ठाकुर जी विश्व में जिस ओर चाहें नेत्र फैला देख लीजिये मनुष्य मात्र अपनी उन्नति के पूर्ण इच्छुक दिखाई देते हैं और शनैः २ उन्नति मार्गपर अपने पग बढ़ाते हुए नाना यत्नों द्वारा उन्नति करते दिखाई देते हैं थोड़ी देर के लिये चाहे यह स्वीकार करलें कि वह अबतक उन्नति नहीं कर पाये हैं परन्तु हां यह दावे से कहा जाता है कि विश्व में ऐसी कोई मानव जाति नहोगी या ऐसा कोई व्यक्ति नहोगा जो अपनी उन्नति न चाहता हो विश्व में वह कौन है जिसे इस ईश्वरीय नियम के आगे माथा न झुकाना पड़ा हो पुनः कैसे स्वीकार कियाजावे कि शूद्रों ने अपने से नीचे वर्णस्थ अनुलोमजों का कार्य्य करना स्वीकार किया हो मनु ने सेवा करना शूद्रों का एक मात्र कर्त्तव्य बतलाया है पुनः उन्हें अयोगव करने की क्या आवश्यकता थी क्या सेवा कार्य्य से वह अपनी जीविका नहीं करसकते थे, क्या

उस समय भी आज कल की भांति अन्नकष्ट उपस्थित रहता था, सेवा करने वाले आज कल ऐसे समय में भी कि जब एक रुपया के आठ सेर गेहूं विकते हों भूखे मरते नहीं दिखलाई पड़ते हैं किन्तु बहुत यत्न करने पर सेवकाई के लिये मिलते हैं तो प्राचीन काल में कि जिस समय भारतवर्ष स्वर्ण भूमि के सुनाम से प्रसिद्ध था कैसे स्वीकार किया जावे कि बुभुक्षा के कारण उन्हों ने अनुलोमज कार्य को स्वीकार किया हो और अपने से हीन वृत्तियों को सुकाल में स्वीकार करना मानवी कर्त्तव्य नहीं हो सकता है फिर कैसे मान लिया जावे कि शूद्रों ने सेवा वृत्ति को त्याग कि जिसके कर्ता आज कल ब्राह्मण ही अधिक पाये जाते हैं अनुलोमज कार्य्य करना स्वीकार किया हो। (२) आप के उद्धृत श्लोक से तो नहीं किन्तु भाषा भाष्य से जो कि आपने प्रकाशित किया है जाना जाता है कि मनु तो आपके विचारानुकूल काष्ठकार्य्य करने वालों को अयोगव बतला रहा है फिर बतलाईये तो सही कि आपने किस आधार पर धर्म शास्त्र की आज्ञा विरुद्ध उन्हें शूद्र संज्ञा का अधिकारी ठहराया यह अन्धेर कैसा धर्म शास्त्र प्रणेता जिसके लिये जो व्यवस्था नियत कर चुके हैं उसके विरुद्ध आप ऐसे साधारण व्यक्ति की नई व्यवस्था देना क्या अर्थ रखता है क्या ऐसे धर्मात्मा पुरुष को अयोग्य ठहरा उसकी व्यवस्था को असंगत बतलाना मनु का सरासर अपमान कर उनसे दो हाथ ऊपर बढ़ना नहीं तो और क्या है ? यदि थोड़ी देर के लिए यह भी मान लिया जावे कि आपके कथन का उपर्युक्त भाव नहीं है तो आपका उन्हें शूद्र बतलाना आप के उपर्युक्त छल पूर्ण भाष्य का पूर्ण साक्षी सिद्ध होता है क्योंकि आप की आत्मा बतला रही है कि आप का लेख असत्य है यही कारण है कि मनु का नाम लेते हुए और सर्व साधारण के सन्मुख उस व्यवस्था को बतलाते हुए आपने उन्हें शूद्र संज्ञा का अधिकारी ठहराया। महाराज धन्य हो बलिहारी है ऐसे प्रपञ्च की क्या मनु जो अपने ३ अ० श्लो० १५८ में कह आया है कि *"धनुश्शराणां कर्ता" को क्या यहां भूल गया था वहां उनके ब्राह्मणत्व को

* सनातनी प्रक्षिप्त नहीं मानते इसलिये हमने उपर्युक्त प्रमाण को मनुवाक्य लिखा है

दरसा यहां अयोगव बतलावे यह विरोध कैसा इसे आप ऐसे विद्वान् के अतिरिक्त और कौन स्वीकार कर सकता है। महाशय! जैसे आपको इस तुच्छ विज्ञापन के लिखने में अगाड़ी, पिछाड़ी की कुछ सुधि न रही कदाचित् आपने मनु को भी ऐसा ही मान रक्खा है ठाकुर पुङ्गव जी जब एक साधारण पुरुष भी पूर्वापर विरुद्ध कार्य्य करने पर निन्दित माना जाता है तब मनु ऐसा धर्मात्मा जो बारम्बार वेद २ चिल्ला उसकी शरण लेता है वेद विरुद्ध कहे इसे मेरी आत्मा क्या शिक्षित समुदायमात्र मानने के लिए तयार न होगा महाशय! स्मरण रहे कि धनुषवाण के कर्ता जिन्हें आजकल तत्त्वा, बढ़ई, खाती, लुहार, और मिस्तरी आदि २ नामों से पुकारते हैं इन के अतिरिक्त और कोई किसी अवस्था में सिद्ध नहो सकेंगे देखिए महर्षि विश्वामित्र अपने धनुर्वेद के प्रथम पादमें यह लिखते हैं।

"तत्रधनुःशब्दश्चापे रूढोपि चतुर्विधायुधवाची वर्त्तते, तच्चतुर्विधम् मुक्तम्, अमुक्तम्, मुक्तामुक्तम् यन्त्र मुक्तञ्च। तत्रमुक्तं, चक्रादि अमुक्तं, खड्गादिमुक्तामुक्तं; शल्यावान्तर भेदादि। यन्त्रमुक्तं शरादि तत्रमुक्तं अस्त्रमित्युच्यते' अमुक्तं शस्त्र मित्युच्यते।

अर्थात् धनुः शब्द चाप के अर्थ मे रूढि है और चार प्रकार के हथियारों का वाची है वे चार प्रकार के यह हैं अर्थात् मुक्त, अमुक्त, मुक्तामुक्त और यन्त्रमुक्त उन में चक्रादि मुक्त खड्गादि अमुक्त शल्य के अवान्तर भेद मुक्तामुक्त और शरादि यन्त्र मुक्त कहलाते हैं सारांश यह है कि मुक्त, आयुध, अस्त्र और अमुक्त शस्त्र कहलाते हैं उपर्युक्त प्रमाण से सिद्ध हुआ कि यन्त्र से मुक्त होकर दूरही शत्रुओं का विध्वंस करने वाले को अस्त्र और साधारण आयुधों को शस्त्र कहते हैं। अस्तु उपर्युक्त प्रमाण हमारे कथन का पूर्ण साक्षी है कि जिसके उपर्युक्त शब्दों के अति रिक्त और कोई किसी अवस्था में नहीं लेसकता है अतएव मनु के उपर्युक्त श्लोक से सिद्ध होगया कि वह लेख हमारे ही विषय में कि जिस

का वर्णन वि०क० वं०नि० में करचुके हैं मिलाया गया है देखिये वि०क० वं० वि० पृष्ठ ८६, ऋषि दयानन्द कृत मनुभाष्य जो उस में उद्धृत है वहां ऋषि वतलाते हैं कि शिल्प विद्या वग़ैर ब्राह्मण शरीर ही नहीं बनता, मनु अपने १० अध्याय ११६ श्लो० मे जहां ब्राह्मण के आपत् काल की वृत्ति का वर्णन करता है वहां द्वितीय नम्बर शिल्प ही को बतलाता है यदि शिल्प ब्राह्मण कार्य्य न होता तो कब सम्भव था कि उसके द्वारा जीवन निर्वाह की आज्ञा प्रदान करता इस विषय मे वि० क० वं० नि: में लिख चुके हैं कृपया वहां देखिये। सत्यार्थ प्रकाश नवम समुल्लास के अन्तिम पृष्ठ को देखिये ऋषि दयानन्द जी ने जहां मनु के ११ श्लोकों को उतार उनमे सात्विक, रजोगुणी, और तमोगुणी के अनेक भेद दिखलाते हुए कीट, मनुष्य, हाथी, घोड़ा, पुरोहित, वकील, वारिष्टर आदि २ के (पूर्वसंचित कर्मों द्वारा भिन्न २ योनियों के) जन्म का वर्णन किया है जिस सब को विस्तार भयसे यहां उद्धृत करना हम योग्य नहीं समझते परन्तु वहींसे केवल एक श्लोक का सङ्ग्रह करते हैं जिस्से सिद्ध होगा कि कैसे उत्तम कर्म करने पर परमात्मा तक्षा का जन्म देते हैं।

ब्रह्मा विश्वसृजो धर्म्मो महानव्यक्त मेवच।
उत्तमां सात्विकीमे तां गति माहुर्मनी षिणः॥

मनु अ० १२ श्लोक० ५१

जो उत्तम सत्त्वगुण युक्त होके उत्तम कर्म करते हैं वे ब्रह्मा सब वेदों का वेत्ता विश्वसृज सब सृष्टिक्रम विद्या को जानकर विविध विमानादि यानों के बनाने हारे धार्मिक सर्वोत्तम पदि युक्त और अव्यक्त के जन्म और प्रकृति वशित्व सिद्धि को प्राप्त होते हैं। अस्तु पाठक ? अब तो आप ठाकुरजी से भले प्रकार परिचित होगए होंगे कि जहां ऋषि दयानन्द सरीखे आदित्य ब्रह्मचारी मनुसे शिल्प विद्या और शिल्पकारों का इतना महत्व दरसा रहे हैं और श्रीमान् पण्डित तुलसी राम जी स्वामी ऐसे विद्वान् मनुका उपर्युक्त अर्थ बतला रहे हैं वहां दिन दोपहर भी न जाने ठाकुरजी को क्यों नहीं सुझाई देता है जो शिल्पियों को इतना महत्व पूर्ण होते हुए भी शूद्र बतला रहे हैं

कहिए पुंगवजी ऋषि दयानन्द जी और पं० तुलसी राम जी स्वामी ऐसे विद्वान् आप के विचारानुकूल मनु को न समझ सके होंगे अब आपही मनु को समझने वाले जन्में हैं बलिहारी है आप की इस तीक्ष्ण बुद्धि पर।

(प्र०) यदि दावा मात्र के लिए यह दोनों बातें मान भी लीजावें कि विश्वकर्मा मैथिल थे............परन्तु ऐसा नहो कर शूद्र ही माने जाते हैं।

(उ०) विश्वकर्मा के मैथिल होने या न होने में हमे भी कुछ विवाद नहीं है क्यों कि हमारा मैथिलत्व विश्वकर्मा पर निर्भर नहीं है। परन्तु विश्वकर्मा मैथिल थे ऐसा हम मानते हैं जिस की पुष्टिमें आप के "शङ्कर जी भगवान् " का कथन जो उन्हों ने अपनी धर्म पत्नी "पार्वती जी " से वर्णन किया है उपस्थित करता हूं यदि उनका सत्यवादी होना स्वीकृत है तबतो हमारा दावा बहाल होगया यदि नहीं तो कृपा कर प्रमाण पूर्वक इसकी असत्यता को दिखलाते हुए इन श्लोकों को किसने कब कैसे और क्यों मिलाने की कृपा की बर्णन करिये हमने निम्न श्लोकों को "त्वष्टृवंशप्रदीप" से संग्रह किया है जिन्हें ग्रन्थकार "शक्त्यागम" से उद्धृत बतलाता है विशेष देखने की इच्छा हो तो "शक्त्यागम,, को देखिये॥

बभूवुः शिल्पनः सर्वे शिल्प वेद परायणाः।
नानादेशकृतावासा नानाख्याने सुबुद्धयः
गौड़ देशे वसन्के चित् ख्याता गौडा महीतले
मिथलामवसन्केचिन्मैथिलास्तेन कीर्तिताः
पञ्चालेष्ववसन्केचित्पाञ्चालास्त उदाहृताः
मथुरामवसन्केचिन्माथुरास्त उदाहृताः

उपर्युक्त प्रमाण से विश्वकर्मा तथा उनके वंशजों का मैथिलत्व स्वयम सिद्ध होजाता है यदि कहेंकि नहींतो कृपा पूर्वक अपने इस कथनकी

पुष्टि में (विश्वकर्मा मैथिल नहीं है) जो २ प्रमाण रखते हों प्रकाशित कर दीजिये क्योंकि आपके केवल कथन मात्रसे विश्वकर्माका मैथिलत्व नष्ट नहीं हो सकता है यदि (आपके) कथन में कुछ भी सत्यता है तो प्रमाणों से उसकी रक्षा करिये अन्यथा प्रमाण शून्य कथन करना भद्रता का कर्त्तव्य नहीं है। हम बढ़ई मात्र के ब्राह्मणत्व के ठेकेदार नहीं हैं। किन्तु हमारा कर्त्तव्य छाये हुए आवरण को हटा वास्तविक मैथिलों के मैथिलत्व को संसार पर दरसाना है। मिथिला ही क्या सम्पूर्ण भारतवर्ष को यदि थोड़ी देर के लिये शिल्प पांडित्व शून्य मानलें तौ भी यह परिणाम कदापि नहीं निकल सकता है कि शिल्पकर्म ब्राह्मणकर्म नहीं है हमने जो २ प्रमाण वि०क०वं०नि० में प्रकाशिति किये हैं और इस पुस्तक के उत्तरार्द्ध में प्रकाशित करेंगे उन २ प्रमाणों का जबतक आप उन से पुष्ट प्रमाणों द्वारा खण्डन प्रकाशित न करदें तबतक आप का उपर्युक्त कथन बालक्रीड़ा के अतिरिक्त और क्या कहा जासकता है यदि विद्याध्ययन किया है तो "शास्त्रार्थ"कर अपने भ्रम को मिटा दीजिये अन्यथा बेस्वर का राग अलापना उचित नहीं है।

(प्र०) हमारा वंश विश्वकर्मा के किसी अवतार विशेष से नहीं चलाहै जब वि० क० देवर्षि अवस्थामें स्वर्ग में थे यह तब चला है॥

(उ) आपने हमारे उपर्युक्त कथन के भाव को नसमझकर ही विश्वकर्मा के मैथिलत्व और सृष्टिक्रम विरुद्ध होने का उलहना दिया है। महाशय शोक से कहना पड़ता है कि जो दूसरे के भावों को नहीं समझते हैं उन्हें दूसरे के प्रतिपक्ष विषय में लेखनी चलाने का कैसे साहस होता है। बलिहारी है! धन्य है!! आपकी बुद्धिमानी पर!!!हम दावे से कहतेहैं कि जब आप हमारे भाव को समझ जावेंगे तब स्वयम् आपका सब भ्रम नष्ट हो जावेगा। "सूप बोले तो बोले चलनी भी बोले जिस में सैकड़ों छेद" मुझपर आक्षेप करने के पूर्व उचितथा कि प्रथम अपने पौराणिक सृष्टि क्रम को विचारते यदि उस से सन्तुष्टि न होती तब मुझ पर कटाक्ष करना योग्य था। कृपा पूर्वक यदि आप को अपने सृष्टिक्रम को यथार्थ सृष्टिक्रम सिद्ध करने की कुछ भी शक्ति है तो जिन जिन कथाओं

पर हम सृष्टिक्रम विरुद्ध होनें की टिप्पाणी पहिले लगाआए हैं और एक आख्यायिका को कि जिसे नीचे वर्णन करेंगे यदि उन्हें सृष्टिक्रम सिद्ध कर सकते हैं तो लेखनी को दृढ़ता पूर्वक पकड़ धर्म युद्धक्षेत्रमें आजाइये यदि नहीं हैं तो दूसरों पर कटाक्ष करना क्या अर्थ रखता है। सुनिये! महर्षि विश्वा मित्र जी हंसकर कहने लगे कि हे पुत्र ! वस्त्र रंगने पर कोई भी योगी नहीं होता शरीर के भीतर जब परम पिता परमात्मा का रङ्ग चढ़जाय तब समझना चाहिये कि वह पूरा योगी होगया महाराज जनक ने अपने योग बल से शरीर के भीतरी सर्व मैलों को धोकर शुद्ध कर लिया है उनकी जब इच्छा होती है तब तब ब्रह्म गुफ़ा में प्राण को चढ़ा कर ईश्वर का दर्शन कर सकते हैं जैसे पानी में कमल रहता है पर पानी उसके पत्तों में नहीं लगता उसी प्रकार संसार में सब व्यवहारों के लिये महाराज जनक जी हैं। अर्थात् उनपर संसार के व्यवहारों का कुछ भी असर नहीं पड़ता। महाराज जनक की धर्म पत्नी का सुनाम सुनयना पुत्रका लक्ष्मीनिधि और कन्याका उर्मिला है । देवी उर्मिला के जन्मसे प्रथम महाराज जनकके राज्यमें १२ वर्ष का सूखा पड़गयाथा तब पण्डितों के कहने से स्वयम् महाराज जनक अपने सोने के हर से खेत जोतने लगे एक जगह हर के फार के लगते ही धरती में गड़ा हुआ घड़ा बाहर निकल पड़ा उसके भीतर जानकी बच्चा बैठीं थीं. हर के फार से फाड़ी हुई ज़मीन को संस्कृत में सीता कहते हैं इसीलिये सीता से जो लड़की पैदा हुई वह सीता नाम से प्रसिद्ध हुई। बनके रहने वाले ऋषि मुनियों को भी जब रावण ने कर लेने के लिये बहुत सताया तब उन लोगों ने अपनी२ जांघ चीर कर थोड़े २ रक्त से एक घट को भरदिया और उस का मुखबन्द कर उसे रावण के यहां पहुंचा यह कहला भेजा कि इसी करसे तेरे कुल का नाश हो जायगा यह श्रवण करते ही रावण ने अपने मन्त्रियों से अनुमति कर उस कुम्भ को अपने राज से दूर जनकपुर के अरण्य में गड़वा दिया उसी से काल पाकर सीता जनमीं। ठाकुर पुङ्गवजी राज कुमार सुद्युम्न का स्त्री बन पुत्रोत्पन्न करना, पुनः एक मास पुरुष और एक मास स्त्री बन के रहना मछली से लड़का और लड़कियों का पैदा होना, रक्त घटसे सीता का जन्म

ग्रहण करना स्त्रियों से वृक्ष पशु हाथी, घोड़ा और गदहा आदि २ पैदा होना, अग्नि मथन पर बालक का जन्म होना आदि २ जहां सैकड़ों सृष्टिक्रम विरुद्ध असम्भव गाथायें भरी पड़ी हैं प्रथम उन्हें तो सृष्टि क्रम सिद्ध कर दिखाईये तब दूसरे को सृष्टिक्रम विरुद्ध कहने के लिए मुख खोलियेगा। अब मैं इस "शीतल सन्ताप हरण" नामक पुस्तक के पूर्वार्द्ध को यहीं समाप्त करता हुआ इसके उत्तरार्द्ध का प्रारम्भ करता हूं इस में भाषा भाष्य सहित प्रमाण और आवश्यक लेख कि जिन से विपक्षी के मतका खण्डन और स्वमन्तव्य का मण्डन हो प्रकाशित किया करूंगा जब तक हमारे सङ्गृहीत प्रमाणों का कोई उनसे पुष्ट प्रमाणों द्वारा खण्डन प्रकाशित न करदेगा तब तक केवल बक बक लगाने या विज्ञापन आदि क्षुद्र उपायों द्वारा हानि पहुंचाने वालों की कुचेष्टाओं पर कोई नोटिस नहीं लिया जावेगा। हम ठाकुर शीतल प्र० जी से पुनः यहां सविनय प्रार्थी हैं कि यदि आपको यथार्थ में सत्य ही की खोज है तो अपने भ्रम निवारणार्थ हम से शास्त्रार्थ के लिये उद्यत होजाइए जिससे सत्य का प्रकाश होजावे और आपका सुनाम कुछ समय तक पृथिवी पर स्थिर रहे।



सूत उवाच

(१) भृगुरत्रिर्वसिष्ठश्चविश्वकर्मामयस्तथा ॥
नारदो नग्निजिच्चैव विशालाक्षः पुरंदरः ॥ १
ब्रह्मा कुमारोनंदीशः शौनको गर्गएवच ॥
वासुदेवोऽनिरुद्धश्च तथाशुक्रबृहस्पती ॥
अष्टादशैते विख्याता शिल्प शास्त्रोपदेशकाः ॥ २

मत्स्य पुराण अध्याय २५२

यदेव शिल्पानि एतेषां वै शिल्पानामनुकृतिर्हि शिल्पमधिगम्यते हस्तीकंसोवासो हिरण्य मश्वतरी रथशिल्पं ॥ ३

शिल्पं ह्यस्यमधिगम्यते । यएवंवेद । यदेवशिल्पानि । आत्मसंस्कृतिर्वैशिल्पान्यात्मानमेवास्यतत्संस्कुर्वंति ॥
अथर्वण वेदीय श्रुति गोपथ ब्राह्मण उत्तर भाग प्रपाठक ६ वा शिल्पानि शंसन्ति ॥ ४

शिल्पिनां देवकर्तृत्वं वंश्यानां विश्वकर्मणः ।
अहं विश्वस्य कर्ताच कर्तारोमम शिल्पिनः ॥५॥
शिल्पि कर्माणि लिंगानि लिंगगर्भाश्च शिल्पिनः
शिल्पिरूपं तु मद्रूपं न भेद श्रणपार्वति ॥ ६

स्कंद पुराणे प्रतिष्ठाखंडे

वेदभू रथ कर्ताच विष्णुर्नारायणः प्रभुः ॥ ७ ॥
उमापति र्विरूपाक्षः स्कन्दः सेनापतिस्तथा ॥
विशाखो हुत भुग्वायुश्चंद्र सूर्यौ प्रभाकरौ ॥ ८ ॥
शक्रः शचीपतिर्देवो यमो धूमोर्णयासह ॥

वरुणः सह गौर्याच सह रुध्या धनेश्वरः ॥
सौम्यागौः सुराभिर्देवी विश्रवा च महानृषिः ॥९
संकल्पः सागरो गंगा स्रवंत्योऽथ मरुद्गणः ।
आदित्या वसवो रुद्राः साश्विनाः पितरोऽपिच ।
धर्माः श्रुतं तपो दिक्षा व्यवसायः पितामहः ॥१०
शर्वर्योदिवसाश्चै व मारीचःकश्यपस्तथा ॥
शुक्रोबृहस्पतिर्भौमो बुधोराहुःशनैश्चरः ॥ ५
नक्षत्राण्यृतवश्चैवमासाः पक्षाश्चवत्सराः ।
वैनतेयाः समुद्राश्चकद्रुजाः पन्नगास्तथा ॥ ६

भारत अनुशासनपर्व अध्याय १६५

इष्वस्त्रवरसंपन्नमर्थ शास्त्रविशारदम् ॥
सुधन्वानमुपाध्यायं कच्चित्त्वंजातमन्यसे ।

वालमीकीय रामायण सर्ग १०० श्लोका १४

प्रजापतिर्वैपितऋभून्मर्त्या न्सतोमर्त्यान्कृत्वा तृतीयसवनमाभजत्

श्रुति ऐतरेय ब्राह्मण पं० ६ अध्याय ४

ब्रह्मयज्ञसमारंभे ब्रह्मगायत्री बिवाहकथायां विश्वकर्मा समागत्य ततोमस्तक मंडनं ॥ चकार ब्राह्मणश्रेष्ठो नाग राणामतोस्थितः ॥२२॥ एतस्मिन्नंतरेतत्र केशनिर्वपणेविधेः विश्वकर्मा मखानांच गायत्र्यास्तदनंतरं ॥ २३ ।

नागरखंडे अध्याय १८०
श्लोक २२ । २३

इंद्रोहरीयुयुजेअश्विनारथंबृहस्पतिर्विश्वरूपामुपाजत ॥
ऋभुर्विभ्वावाजोदेवाअगच्छतस्वपसोयज्ञियंभागमैतन ६

भाष्यं—इंद्रोहरी युयुजे। ऋभुभिर्निर्मितौहरिद्वर्णावश्वौ स्वरथेयोजयति ॥ अश्विन ॥ अश्विनौयुयुजाते। ऋभुभिः कृतंरथंयोजयतः।बृहस्पतिः विश्वरूपामेतन्नामिकामृभुभिः कृतांगामुपाजत स्वीकरोति। अतः। ऋभुर्विभ्वावाजइति ऋभवोदेवानागच्छत्देवत्वंप्राप सुअपसः सुकर्माणोऽश्व रथगवादिपरमाद्भुतकर्मणांकर्तारोयूयंयज्ञीयंभागमेतनय ज्ञेनप्रार्पितस्यहविषो भागंप्राप्तवंतःस्थ ॥

भारत अनुशासन पर्व अ० ८३ अष्टौचांगिरसः पुत्रा आग्नेयास्तेऽप्युदाहृताः ॥ बृहस्पतिरुतथ्यश्च पयस्यः शांतिरेवच ॥ घोरोविरूपः संवर्तः सुधन्वाचाष्टमःस्मृतः

वायुपुराण अध्याय ४- शृणुतांगिरसोवंशमग्नेः पुत्रस्यधी मतः। यस्यान्ववाये संभूताः भारद्वाजाः सगौतमाः ॥ ९६ ॥

देवाश्चांगिरसोमुख्याइषुमंतोमहौजसः॥सुरूपाचैवमारीची कार्दमी च तथास्वराट् ॥ ९७ ॥ पथ्याचमानवीकन्याति-स्रोभार्यास्त्वथर्वणः॥ इत्येतांगिरसः पत्न्यस्तासुवक्ष्यामि संततिम्॥९८॥अथर्वणस्तु दायादास्तासुजाताःकुलोद्वहाः॥ उत्पन्नामहताचैवतपसाभावितात्मनाम्॥९९॥बृहस्पतिः सुरूपायां गौतमः सुषवेस्वराट्। अयंध्यंवामदेवंचऔतथ्य मुशिजंतथा ॥१००॥ धिष्णुः पुत्रस्तु पथ्यायां संवर्तश्चैव मानसः ॥ विचितश्चतथायास्यः शरद्वाश्चाप्युतथ्यजः ॥ १०१॥अशिजोदीर्घतमाबृहदुवायोवामदेवजः॥ धिष्णुः पुत्रः सुधन्वासऋभवश्चसुधन्वनः ॥ १०२ ॥ रथकाराः स्मृतादेवा ऋषयोये परिश्रुताः॥ बृहस्पतेर्भरद्वाजोविश्रुतः सुमहायशाः॥ १०३ ॥ अंगिरसस्तुसंवर्तोदेवानां गिरसः शृणु ॥ बृहस्पतेर्यवीयांसो देवाश्चांगिरसः स्मृताः॥ १०४ ॥

लोहशिल्पअतिविचित्र॥लोहकर्मामन्वीश्वर॥तुम्हि-
येसंततीमाजीसमग्र॥ शस्त्रादिप्रकारनिर्मितील ॥ ७१ ॥
दारूब्रह्मणजेकाष्ठनामदारव ॥ कृष्णोपकरणादिअपूर्व ॥
निर्मीलसर्वमयाचार्य॥७२॥एवंतुम्हीनिजसंतती पंचाळ-
नाम्नीशिल्पाधिपती ॥ शिल्पविद्यानिपुणक्षितीं ॥तुम्ही-
चप्रतीहोईपूर्ण ॥ ७३ ॥

अग्निपुराण अध्याय ३८ मूर्तिकर्मफलम् ॥ शिव-
ब्रह्मार्कविघ्नेशचंडीलक्ष्यादिकात्मनाम् ॥ देवालयकृतेः
पुण्यंप्रतिमाकरणेऽधिकम् ॥ ३१ ॥ प्रतिमास्थापनेयागे-
फलस्यांतोनविद्यते ॥ मृन्मयाद्दारुजपुण्यं दारुजादिष्ट-
काभवे ॥३२॥इष्टकोत्थाच्छैलजेस्याद्धेमादेरधिकंफलम् ॥
सप्तजन्मकृतंपापंप्रारंभादेवनश्यति ॥३३॥
पद्म पु. भू. अध्या. २८ महादेवउवाच-विश्वकर्मन्नमस्ते-
ऽस्तुविश्वचित्तविभावन ॥ ७३ ॥ विभावयममाभीष्टं-
गृहालंकरणादिकम्॥त्वत्कृतांभोगसामग्रीमुपादायमहा-
मते ॥ ७४ ॥ भोक्ष्यामिविविधान्भोगा निहामुत्रचयो-
जितः ॥ एवमुक्त्वामहादेवोविश्वकर्माणमद्भुतम् ॥७५॥
अष्टाक्षरेणमंत्रेणपूजयामाससादरम् ॥ सांगसावरणं-
देवंशिल्पानामीश्वरंप्रभुं ॥ ७६ ॥ ततःस्वेष्टंगृहारामालं-
काराद्यप्तवान्सुखम् ॥ पंचभिस्तनयैःसार्धंविश्वकर्मात-
दाशिवम् ॥ ७७ ॥ तोषयामासशिल्पैःस्वैस्ततस्तुष्टो-
महेश्वरः ॥ कार्यांतेपूजयामासततस्तान्शिल्पिसत्तमान्
॥ ७८॥ वासोभिरन्नपानैश्चधनैर्नानाविधैरपि ॥ वरांश्च-
तेभ्यःप्रत्येकंददौदुःखहरोहरः ॥ ७९ ॥ अक्षय्यंसंततिर्वो
ऽस्तुयशःस्फीतंतथाऽस्तुवः॥युष्मांश्चस्मरतःसन्तुसंपद-

श्चपदेपदे॥ ८० ॥इत्युक्त्वातन्महादेवो विसर्ज्यचयथा-
क्रमम् ॥ प्रासादेरमयामासपुत्रकामाद्युमांसतम् ॥ ८१ ॥

तस्माच्छिल्पि वरान्नित्यं पूजयंतिविचक्षणाः॥ तेहि
कांक्षंति कल्याणं गृहिणां जीवनार्थिनः ॥ ३ ॥ पद्मपुराण
भू० अ० २१ ॥

स्कंद पुराणे प्रभासखंडे सोमनाथ माहात्म्ये सोम-
पुत्र संवादे शिल्पिनामुत्पत्तिप्रकरणे ॥ ईश्वर उवाच॥
शिल्प्युत्पत्तिं प्रवक्ष्यामि शृणुषण्मुखयत्नतः ॥ वि-
श्वकर्मामहद्भुतं शिल्पिनां शिवकर्मणाम् ॥१६॥

मदंगेषुचसंभूताः पुत्राः पंचजटाधराः ॥
हस्तकौशलसंपूर्णाः पंचब्रह्मरताः सदा ॥१७॥
पाणिस्थापक संजाताममतुल्याश्चशिल्पिनः ॥
संध्यात्रयंप्रकुर्वंति स्नानदानादितर्पणम् ॥ १८ ॥
वैश्वदेवं बलिर्दानंषट्कर्माणीतिशिल्पिनां॥
शिवार्चनरतानित्यंजपहोमादिकर्मसु ॥ १६ ॥
एवंविद्याक्रियाख्याता शिल्पिनां च वशंकर ॥
विश्वकर्मपराणांच ब्रह्मविष्णुशिवात्मनाम् ॥२०॥
तत्रसूत्रंसमाख्यातं विश्वसूत्रंस्वयंभुवा ॥
प्रासादभुवनादीनिलिंगस्थापनमेवच ॥२१॥
प्रतिष्ठापंचधाकार्याशिल्पिनाशिवकर्मणा ॥
ब्रह्मस्थानेभवेद्ब्रह्माललाटेचाग्निमादिशेत्॥ २२॥
चंद्रादित्यौनयनयो र्नासायामश्विनौतथा ॥
मुखेब्रह्मासपुत्रश्चकंठेदेवो जनार्दनः ॥ २३॥

हृदयेचेश्वरोदेवोनाभौगंधर्वदेवता ॥
गुह्येकामेश्वरोदेवः पादयोर्वायुदेवता ॥ २४ ॥
पादाधोवरुणोरक्षेदंगुलीषुच मातृकाः ॥
भुजयोः कृष्णगोपालावग्रतः शेषतक्षकौ ॥२५॥
मणिबंधमहामायाचांगुली ष्वीश्वरीकृतिः ॥
एवं विधः समाख्यातः शिल्पिनोंऽगे षुषण्मुख॥२६॥

इतिस्कं.पु० प्र० खंडेसोमनाथमाहत्म्ये प्रथमोऽध्यायः॥१॥
रूद्राक्षमाल्यांबरधरोगिरिकोगिरिकप्रियः ॥
शिल्पीशः"शिल्पिनांश्रेष्ठःसर्वशिल्पप्रवर्तकः॥२८२॥
वायुपुराण अ० ३० दक्षकृताशिवस्तुतौ"

कलौदेव सचेतन ॥ वर्णतूयासी ब्राह्मण ॥ ब्राह्मण पूज्य शिलास्वर्ण ॥ प्रमुख निर्माष सुरप्रतिमा ॥ ९ ॥ शिला स्वर्णादि निर्मित ॥ देवमूर्तीसमस्त ॥ मातृपितृ-सुभक्तवत ॥ मुख्यदैवत शिल्पी पूज्य ॥ १० ॥शिला-स्वर्णादिसुप्रतिमा ॥ प्रतिष्ठा काली शिल्पिसत्तमा ॥ तदर्थपूजावपूजकोत्तमा ॥ तेणें प्रतिमा सुप्रसन्न ॥ ११ ॥ शिल्पिद्वारेंशिलादिप्रतिमा॥पूजितांसंपूज्य विश्वकर्मा॥ शिल्पी विश्वकर्मणः प्रतिमा युगत्वधर्म्मानुरूपंतत्कर्म॥१२

सप्तदश प्रजापतिः। प्रजापतेराप्त्यै । अर्वासिस-सिरसि । वाज्यसीत्याह। अग्निर्वाअर्वा । वायुः सप्तिः। आदित्योवाजी। एताभिरेवास्मैदेवताभिर्देवरथंयुनाक्ति प्रष्टिवाहिनंयुनक्ति।प्रष्टिवाहीवैदेवरथः। देवरथमेवास्मै-युनक्ति ॥ तै० ब्रा०

शिल्पाचार्य देवाय नमस्ते विश्वकर्मणे ॥ इतिब्रह्म-पुराणेवत्सरारंभविधौ ॥

भुमिकालिप्तानेन मयस्याष्टोतरंशतम् ॥ सार्धहस्त-त्रयंचैवकथितंविश्वकर्मणा ॥ प्राहुः स्थपयश्चात्रमतमेकं वि-पश्चिताः॥कपोतपालिसंयुक्तान्यूनागच्छन्तितुल्यताम् ३८।

हिरण्यकेशिसूत्र-निषादरथकारयोराधानादग्निहो-त्रंदर्शपूर्णमासौचनियम्येते । वैजयंतीव्याख्यायांवर्षा-सुरथकारोग्नीनादधीतेतितथाऋभूणांत्वादेवनां व्रतपते व्रतेनादधामीति रथकारस्ये तिचदर्शनादाधानंरथकारजातेः आधानोत्पन्नाग्नीनापरार्थत्वाद ग्निहोत्रदर्शपूर्णमासौनि-यमस्तथाचैतया निषादस्थपतिंयाजयेदिति ॥ निषादश्चा सौस्थपतिश्चेतिकर्मधारयाभिप्रायेणनिषादइत्युक्तं तेन आपस्तम्बसूत्रे निषादानांस्थपतिस्त्रैवर्णिकं एवेतितन्निरा कृतमेतन्न्यायशास्त्रसिद्धं ।तस्येष्टिविधानादाधानमाचा-र्योमन्यते । एकस्याधानमात्रं नियतं । परस्यविकृतेष्ट्युप-क्षिप्तमाधानं । द्वयोरप्यग्निहोत्रदर्शपूर्णमासौचनियम्यते। न्यायमतेननिषादस्याधानं-तस्यलौकिकाग्निषु॥ विकृते-ष्टिमात्रमवकीर्णिनोब्रह्मचारिणइवगदर्भस्याति ॥

अष्टाध्ययी पाणिनिसूत्रपाठे ॥ सूत्रे ॥ शिल्पिनि-चाकृञः । ६ । २ ७ । ६ संज्ञायांच । ६ ।२ । ७७ ॥ सिद्धान्त-कौमुद्यांवृत्तौशिल्पिवाचिनिसमासे अण्णांतेपरे पूर्व-माद्युदात्तं सचेदण्कृञः परो न भवति । तंतुवायः । शिल्पि निकिं । कांडलावः । अकृञः किं । कुंभकारः ॥ संज्ञायांच अण्णंतेपरे । तंतुवायोनामकृमिः अकृञः इत्येव । रथकरो-नामब्राह्मणः ॥ सि० ३८११ ॥

प्रमाण २ रे कुर्वादिभ्योण्यः। पाणिनिसूत्रं ४।१।१५१।

ब्राह्मण जातिबोधक आर्षेयगोपत्याधिकारे गणसूत्रं कुरु। गर्ग। मंगूष। अजमार। रथकार। वावदूक। कवि। मति। कापिंजल। इत्यादिषु ब्राह्मणजात्यर्थको-ष्यप्रत्ययः॥ कौरव्याः ब्राह्मणाः। गार्ग्याः। मांजुष्याः। आजमार्याः। राथकार्याः। वावदूक्याः। काव्याः। मात्याः कापिंजल्याः। ब्राह्मणाः। इति सर्वत्र॥

अन्यत्र क्षत्रियेषु अण् प्रत्ययः॥ पद्म संहितायां क्रियापादे प्रतिष्ठाविधौ-प्रासादं प्रविशेच्छिल्पीरथकारो द्विजोत्तमः॥ इति॥

श्रीमहाभारते अनुशासनपर्वणि दानधर्मे भीष्म युधिष्ठर संवादे,योगो ज्ञानं तथा सांख्यं विद्याः शिल्पादिकर्मच॥ वेदाःशास्त्राणिविज्ञानं एतत्सर्वं जनार्दनात्॥

नैरुक्तेदेवता कांडे पृ० ३१५-अंगिरसोनः पितरोनवग्वा अथर्वाणोभृगवःसोम्यासः॥ ऋ०७।६।१५।१इति॥ विश्वमेदिन्यौकोशौ-नचतुःश्लोकसुधन्वाविश्वकर्माणि

श्रुतिऐतेरय ब्राह्मणपंचिका ६ खंड २७अ०५शिल्पानि शंसंतिदेवशिल्पान्येतेषां वैशिल्पानामनुकृतीह शिल्पमधिगम्यते। हस्ती कंसोवासो हिरण्यमश्वतरी रथः शिल्पं हास्मिन्नधिगम्यते। यएवंवेद यदेव शिल्पानि॥ ३॥

सायणभाष्ये—आश्चर्यकरं कर्मब्रते। तच्चशिल्पं द्विविधं देवशिल्पं मानुषशिल्पंचेति। नाभानेदिष्ठादीनि शिल्पानि देवानां प्रीतिहेतुत्वाद्देवशिल्पानीत्युच्यन्ते। एते-

षामेवदेव शिल्पानामनुकृतिः सदृशरूपं इहमनुष्यलोके शिल्पमधिगम्यते प्रतीयते हस्तीत्यादिनातदेवोदाहृयते। लोके शिल्पिनः कर्मकरामृद्दार्वादिभिः हस्तिसदृशमाकारं निर्मिमीते। तथान्यैः शिल्पिभिः कंसोदर्पणादिनिर्मीयते। अपरैरन्यैः सुवर्णमयकटकमुकुटादि निर्मिमीते।

अपरैश्चाश्वतरीरथोनिर्मिमीते। गर्दभ्यामश्वादुत्पन्नाश्वतरी जातिः तद्युक्तोरथोऽश्वतरीरथः तदेतत्सर्वमस्माभिरधि-गम्यमानमानुषशिल्पमेतद्दृष्टवान। भानेदिष्ठादिशिल्प माश्चर्यकरमिति निश्चेतव्यं। वेदनं प्रशंसति शिल्पं हास्मिन्नधिगम्यतेयएवंवेदेति।

अस्मिन्वेदितरिशिल्पं कौशलं नानाविधं प्राप्यते सानुनासिक प्लुतेन शिल्पानां पूज्यत्वं दर्शयति। यदेव शिल्पानँ ३ इति। यस्मान्नाभानेदिष्ठादीनि शिल्प-शब्दवाच्यानि तस्मात्सुवर्णा भरणादिवर्ज्यानीत्यर्थः॥ वाल्मीकि रामायणे बालकांडसर्ग १४—इष्टकाश्चयथा-न्यायंकारिताश्चप्रमाणतः॥ चितोग्निर्ब्राह्मणैस्तत्रकुशलैः शिल्प कर्मणि॥२८॥ सचितोराजसिंहस्यसंचितःकुशलैः र्द्विजैः॥ गरुडोरुक्मपक्षोवै त्रिगुणाष्टादशात्मकः॥ २९



प्रमाणों का भाषानुवाद ।

सूत जी बोले कि—

इतने महात्मा शिल्पशास्त्र के उपदेशक हुए हैं उन के नामों को सुनिये, भृगु. अत्रि, वाशिष्ट, विश्वकर्म्मा और यम, देवर्षिनारद, अनग्निजित्, विशालाक्ष, पुरन्दर, (इन्द्र) ब्रह्मा, नन्दीश्वरकुमार, महर्षिशौनक, गर्गाचार्य्य, वासुदेव! (कृष्ण) अनिरुद्ध, दैत्यगुरु शुक्र और देवगुरु बृहस्पति यह अठारह शिल्पशास्त्र के प्रसिद्ध उपदेशकरनेवाले हुए हैं ।

टीका कार लिखते हैं कि शिल्पका अर्थ यह है कि पूर्वोक्त महात्माओं ने जो शिल्पकार्य्य किये उनका अनुकरण अर्थात् वैसेही पदार्थों का बनाना शिल्पकहलाता है जैसे शीसा, कांसा, वस्त्र, सोना, आदि धातु, नौका और रथ आदि का बनाना शिल्प है । आत्मा अर्थात् जीव के वाह्य उपनयनादि और आभ्यन्तर प्राणायाम प्रत्याहार और धारणाध्यानादि संस्कार करना भी शिल्प कहाता है ।

अथर्व वेदीय गोपथ ब्राह्मण के उत्तरभाग छटे प्रपाठक में लिखा है कि" शिल्पों की प्रशंसा करते हैं ।

स्कन्दपुराण के प्रतिष्ठा खण्ड में लिखाहै (महादेव पार्वती से कहते हैं)

हे पार्वति विश्वकर्म्म के वंश में उत्पन्न हुए शिल्पी देवतों के बनाने वाले हैं, मैं जगत् का कर्त्ताहू और मेरे कर्त्ता शिल्पी लोग हैं १, सर्व चिन्ह (आकृति और उन के भावभूषादि) शिल्पियों का काम है क्योंकि शिल्पियों के पेट (हृदय) में सब चिन्ह भरे हैं मुझमें और शिल्पियों में कोई भेद नहीं है ।

महाभारत अनुशासन पर्व की १६९ अध्याय में भी लिखा है।

वेदों का ज्ञाता रथकार विश्वकर्म्मा विष्णु पार्वतीके स्वामी महादेव, विरूपाक्ष, सेनापति स्कन्द, विशाख, अग्नि, वायु, सूर्य्य और चन्द्रमा, शचीकेस्वामी इन्द्र, यम अर्णाकेसहित धूमदेव, गौरीकेसहित वरुण, ऋध्याकेसहितकुवेर और महर्षि विश्रवा, उत्तम गौ कामधेनु संकल्प, समुद्र, गंगादि नदियां और मरुद्गण (४९ वायु) १२ आदित्य ८वसु, ११ रुद्र, आश्विनीकुमार और सम्पूर्ण पितर, धर्म्म, वेद, तप और दीक्षा, उद्योग, पितामह(ब्रह्मा) रात्रि, दिन, मारीच, कश्यप, शुक्र, बृहस्पति, मंगल, बुध, राहु, शनैश्चर, सम्पूर्ण नक्षत्र, ऋतु, महीने, पक्ष, और सम्वतसर, पक्षी, समुद्र और सर्प यहसब कद्रुसे उत्पन्न हुए

वाल्मिकीय रामायण बा० कां० सर्ग१००का चौथे श्लोक का अर्थ— यह है,, उपाध्याय सुधन्वाका क्या तुम आदर करते हो? जो बाण और शस्त्रास्त्र में कुशल एवम् अर्थ शास्त्रमें व्युत्पन्न हैं नागर खण्ड में भी लिखा है (अ०१८०) ब्रह्मयज्ञके आरम्भमें ब्राह्मण श्रेष्ठ विश्वकर्म्मा ने विष्णु भगवान्की सम्मति से प्रथम यज्ञका पश्चात् गायत्री के मस्तक का मुण्डन किया ऐसेही श्रुतिमें भीलिखा हैं कि ,, इन्द्रो हरी युयुजाते,, इस- ऋचा का भाष्यानुसार अर्थ यहहै कि।

ऋभु अर्थात् शिल्प कार्य्य से देवताभाव को प्राप्तहुए शिल्पी लोग जिस रथ को बनाते हैं उसमें अश्वी अर्थात् देवतों के घोड़ों को जोड़ते हैं तब बृहस्पति अर्थात् विद्वान् लोग उस को यात्रार्थ स्वीकार करते हैं इसकारण हे शिल्पि जनों! तुम लोग यज्ञ में भाग पाते हो।

महाभारत के अनुशासन पर्व की ८३ अध्याय में भी लिखा है कि महर्षि आङ्गिरा के ८ पुत्रहुए जो आग्नेय नामसे प्रसिद्ध हैं। उनमें से १ बृहस्पति, २ उतथ्य, ३ पयस्य' ४ शान्ति, ५ घोर, ६ विरूप, ७ सम्वर्त्त, और ८ वें सुधन्वा थे।

वायु पुराण की चतुर्थ अध्याय में लिखा है।

अग्नि के पुत्र महर्षि अङ्गिरा के वंशका वर्णन आप लोग सुनिये जिन के भारद्वाज और गौतम उत्पन्नहुए थे अङ्गिरा के वंशमें महायशस्वी और महावाणधारी देवताही प्रधान हैं अर्थात् विरूप मारीचि के कर्दम के और स्वराट के पुत्र ही प्रधान हैं।

मनुकी कन्या पथ्मा नामकी थी वह तीनोंही अथर्व ऋषिकी पत्नी थीं अब उनकी सन्तति का वर्णन सुनिये। अथर्व ऋषिने परमतप करके कुलकी वृद्धि करने वाले पुत्रोंको उत्पन्न किया सुरूपा नामकी स्त्रीसे वृहस्पति, गौतम और स्वराट् नामके पुत्र उत्पन्न हुए। अवन्ध्य, वामदेव, उतथ्य और उशिज। पथ्या नामकी स्त्रीसे धिष्णु, सम्वर्त्त और विचित्ति उत्पन्न हुए। उतथ्यके पुत्र शरद्वान् हुए, एवम् दीर्घतमा, वृहद्वाक्य और वामदेव हुए, धिष्णुके पुत्र सुधन्या और सुधन्वा के ऋभव नामक पुत्र हुए। यह सब देवता रथकार प्रसिद्ध हैं। वृहस्पति के पुत्र महा प्रतापी भरद्वाज हुए थे यह सब अंगिरा के वंशज हैं।

इसकी टीकामें एकमहाराष्ट्र महाशय लिखते हैं कि शिल्पका अर्थ लोहा और काष्ठ इत्यादि की चित्र विचित्र वस्तुओं का बनाना है।

अग्नि पुराण की अध्याय ३८ में मूर्ति बनाने के फल प्रकरण में लिखा है।

महादेव, ब्रह्मा, सूर्य्य, गणेश और महालक्ष्मी आदि देवियों के मन्दिर बनाने से जो फल है उससे अधिक फल मूर्त्ति बनाने से है और परमात्मा के स्थापन करने से जो फल होता है उसका कुछ अन्त नहीं है मट्टी की मूर्त्ति से काष्ठ की मूर्त्ति बनाने का काष्ठकी मूर्त्ति से ईटकी मूर्त्ति का ईटकी मूर्त्ति से पत्थर की मूर्त्ति बनाने का और पत्थर की मूर्त्ति बनाने से सोने आदि धातुओं की मूर्त्ति बनानेका ऐसा अधिक पुण्य है कि जिस्से ७ जन्मके पापक्षय हो जाते हैं।

पद्म पुराण के २८ अध्याय में लिखा है।

महादेव बोले हे विश्वकर्म्मन् ! तुमको नमस्कार है। तुम संसार के चित्र बनाने में कुशल हो इसलिये मेरे घर को सुशोभित करने वाली सामग्री तयार करदो-हे महामते ! तुम्हारी प्रस्तुत की भोग सामग्री को प्राप्तकरके इसलोक और परलोक में मैं सुख भोगूंगा।

महादेव जी इस प्रकार से अद्भुत कर्म्म करने वाले विश्वकर्म्मा से सम्भाषण करके महादेव जी ने विश्वकर्म्मा की अष्टाक्षर मंत्र से पूजा की, शिल्प कलाओं के महा प्रभु विश्वर्म्मा की अङ्ग और आवरणों के सहित पूजा की, तब विश्वकर्म्मा ने अपने पांचों पुत्रों के सहित विचित्र रीति के घर और उपवन बना के शिव महाराज को सन्तुष्ट किया, सब कार्य्यों के समाप्त होने पर महादेव ने सब शिल्पकारों की पूजा की और सब को दुःख दूर करने वाला वर दिया। महादेव ने कहा—हे शिल्पयो ! तुम्हारी सन्तानों का कभीं नाश नहो तुम्हारे यश की वृद्धि हो, तुम्हारा स्मरण करने वालों को चरण चरण पर सुख और सम्पत्ति की प्राप्तिहो, ऐसा कहके महादेव ने शिल्पकारों को क्रमशः विदाकिया और पुत्रकामनावाली पार्वती के सहित उस राजभवन में बिहार करने लगे इस से विज्ञ (चतुर) मनुष्य शिल्पकारों का सदा सत्कार किया करते हैं क्योंकि शिल्पकार लोग सब गृहस्थों की दीर्घायु चाहते हैं पद्म पुराण ५० अ० २१।

स्कन्दपुराण के प्रभासखण्ड सोमनाथ माहात्म्य. सोमपुत्र के सम्वाद में शिल्पकारों की उत्पत्ति इस प्रकार से लिखी है

महादेव बोले शिल्पकारों की उत्पत्ति कहता हूं हे कार्त्तिकेय तुम उस को सुनो ! कल्याणकारी कर्मों के करने वाले शिल्पकारों के प्रधान पुरुष विश्वकर्मा हुए हैं। यहशिल्पी मेरेही अंग से जटा धारण करने

वाले, हस्तक्रिया में निपुण और सदा ब्रह्म के ध्यान में तत्पर रहने वाले पांच पुत्र उत्पन्न हुए थे। वह पांचों हस्त स्थापन (थपकी के कार्य्य में चतुर) से उत्पन्न हुए मेरे समान शिल्पकार और तीन काल की सन्ध्या तथा स्नान दान और पितृ तर्पण करने वाले हुए—

बलिवैश्व देव करना और दान देना आदि ६ कर्म्म शिल्पी जनों के हैं, नित्य ही शिव महाराज की पूजन करना जप और होमादि कर्म करना यही शिल्पियों के कर्त्तव्य हैं। इस प्रकार की जिनकी क्रिया है वह शिल्पी जगत् में प्रसिद्ध हैं विश्वकर्म्मा ही ब्रह्मा, विष्णु और शिवात्मक हैं अतएव विश्वकर्म्मा का ध्यान पूजन करना शिल्पी जनों का कर्त्तव्य है, शिल्पियों का सूत्र विश्वकर्म्म सूत्र कहाता है, राजमहल बनाना, नगर बसाना और लिंग स्थापन करना और पांच प्रकार की देव प्रतिष्ठा करना शिल्पियों का प्रधान कर्म्म है, उपस्थेन्द्रिय के स्थान में अग्निदेव नेत्रों में सूर्य्य और चन्द्रमा नासिका के दोनों नथनों में अश्विनी कुमार मुख में ब्रह्मा और उनके पुत्र, कण्ठ में विष्णु, हृदय में शिव, नाभि में गन्धर्व, गुदेन्द्रिय में कामदेव, चरणों में वायु, पैर के तलुओं में वरुण रक्षक हैं और अंगुलियों में मात्रिका देवी रक्षा करें दोनों हाथों की कृष्ण और गोपाल आगे की ओर शेष नाग और तक्षक मणि बन्ध अर्थात् मेरुदण्ड की महामाया और हाथों की अंगुलियों की अधीश्वरी रखवाली करे इस प्रकार से शिल्पियों को अंगन्यास, करन्यास और कवच पाठ करना चाहिये,

पु० प्र० सोमनाथ माहात्म्य में लिखा है

रुद्राक्ष की माला दिव्य वस्त्र धारण किये पर्वत की गुफा में रहने वाले शिल्पियों में श्रेष्ठ शिल्पियों के स्वामी, और सर्व शिल्पों के प्रवर्त्तक

वायु पुराण अध्याय ३० दक्ष की स्तुति में लिखा है।

शिल्पी विश्व कर्म्मा की मूर्त्ति बनावे यह युग धर्म्म के अनुकूल है

तैत्तिरेय ब्राह्मण में भी लिखा है। १७ प्रजापति हैं प्रजापति की प्राप्ति के वास्ते आप अर्वा हैं, आप सप्ति हैं, और वाजी है अर्वा का अर्थ अग्नि हैं सप्तिका अर्थ वायु है और वाजी का अर्थ सूर्य है इस ब्राह्मण वाक्य का तात्पर्य्य यह है कि शिल्पियों को अग्नि वायु और सूर्य्य के द्वारा अपने कार्य्यों की सिद्धि करनी चाहिये इन्हीं तीनों से देव लोग आकाश और पृथ्वी में अपने रथ चलाते हैं।

ब्रह्मपुराण में लिखा है शिल्पाचार्य्य विश्वकर्म्मा देव को नमस्कार है

ब्रह्मपुराण की वर्षारम्भकी विधि में लिखाहै कि भूमि को लीपने में तीन मत हैं मय के मत से १०८ हाथ, विश्वकर्म्म के मत से साढ़े तीन हाथ स्थपतियों का मत इन दोनों से भिन्न है

हिरण्य केशि सूत्र में लिखा है कि रथकार और निषाद अग्न्याधान करके दर्शेष्टि (अमावस के दिन) और पौर्णमासेष्टि करें। वैजयन्ती व्याख्या में कहा है कि वर्षा ऋतु में रथकार अग्न्याधान करे और ऋभूणां त्वा देवानां और " अग्ने व्रतपते व्रतेना दधामि " इन मंत्रों से होम करे इस प्रमाण से सिद्ध है कि रथकार जाति को अग्न्याधान का अधिकार है, आधान से उत्पन्न हुयी अग्नि में दर्शेष्टि और पौर्णमासेष्टि करने का उन के वास्ते नियम है "स्थपतिश्चासो निषादः, इस कर्म्मधारय समास से यह सिद्ध है कि द्विज को ही अग्नयाधान और दर्श पौर्णमास्य का अधिकार है अन्य को नही इस कारण जो लोग कहते हैं कि आपस्तम्ब सूत्रों में इसका निषेध है उनका कथन न्याय विरुद्ध है क्यों कि उनके वास्ते अग्न्याधान होनेसे उनका आचार्य्यत्वसर्व सम्मत है, इनमें से एक के वास्ते केवल अग्न्याधान दूसरे (अर्थात् रथकार) के वास्ते यज्ञाधिकार कहने से

दोनों के वास्ते दर्श पौर्णमास्य का विधान सिद्ध होता है न्याय के मत से निषाद को अग्न्याधान का विधान लौकिक अर्थात् गार्हपत्याग्नि विधान जान पड़ता है ।

अष्टाध्यायी अर्थात् पाणिनीय सूत्रों में (शिल्पिनिचाकृञ और संज्ञायाञ्च) इनकी व्याख्या करतेहुए सिद्धान्त कौमुदीकेरचक भट्टोजी दीक्षित लिखते हैं कि शिल्पि वाचक समास में जहां अण् प्रत्ययान्त शब्द परे होतो पूर्व पद आद्य उदात्त हो परन्तु वह अण् कृञ् धातु के साथ न हो शिल्पी इस वास्ते कहा कि काण्डलाव पद में आद्य उदात्त स्वरनहो अकृञ् इस वास्ते कहा कुम्भकार पदमें नहो, संज्ञावाचक इस वास्ते कहाकि कमी वाचक तन्तुवाय शब्द में नहो अकृञ कहने से ब्राह्मण वाचक रथकार शब्द में भी आद्य उदात्त स्वर नहीं होता ।

कुर्वा दिभ्यो रायः ४–१–१५१ इस सूत्रके अर्थ में लिखा है कि ब्राह्मण जाति बोधक ऋषियों के गोत्र और अपना (सन्तान) अर्थ में कुरु गर्ग, मंजूष अजमार, रथकार वावदूक. कवि मति कपिंजल इत्यादि शब्दों से प्रत्यय होता है जैसे कौरव्य ब्राह्मण, गार्ग्य, आजमार्य्य, राथकार वावदूक्य, काव्य, कापिंजल्य ब्राह्मण आदि ।

पद्म संहिता के क्रिया पाद में भी लिखा है राजभवन में द्विजोत्तम शिल्पी प्रवेशकरे, महाभारत के अनुशासन पर्वान्तर्गत दान धर्म्म के भीष्म युधिष्ठिर सम्वाद में भी लिखा है कि योग, ज्ञान, सांख्य और शिल्प विद्या और शिल्पकर्म्म, वेद, शास्त्र और विज्ञान यह सबजनार्दन से ही प्रतिष्ठित हुए हैं ।

निरुक्त के दैवत काण्ड के पृ॰ ३१९ में ऋग्वेद के अङ्गिरसोनः पितरो इस मंत्र की व्याख्या में लिखा है सुधन्वादि विश्वकर्म्म ।

ऐतरेय ब्राह्मण की ६ ठी पंजिका खण्ड २७ अ० ५ लिखा है कि शिल्प की प्रशंसा करते हैं इन्ही शिल्पों की नलक कांसा ताम्बा आदि धातु से जो जगत् में की जाती है उसे भी शिल्प कहते हैं सायणभाष्य में इस ब्राह्मण वाक्य का अर्थ इस प्रकार से कियागया है कि अब आश्चर्य्य कारी कर्म्मों को कहते हैं वह शिल्पकर्म्म दो प्रकारका है एक देवशिल्प और दूसरा मनुष्य शिल्प, यज्ञो में शिल्प कार्य्य किये जाते हैं वह देवतों की प्रीति को बढ़ाने वाले हैं अतएव उन्हें देव शिल्प कहते हैं इन्ही देव शिल्पों की नकल को मनुष्य शिल्प कहते हैं, देखा भी जाता है कि संसार में शिल्पी लोग हस्ति आदि की आकृति बनाते हैं, अर्थात् मट्टी काष्ठादि विचित्र प्रकार के चित्रादि बनाते हैं यह सब ईश्वरीय शिल्प की ही नकल है कोई शिल्पी कांच के दर्पण आदि बनाते हैं कोई सुवर्णादि धातुओं से कुण्डल मुकुटआदि बनाते हैं. कोई घोड़े गधे आदि की सूरत, कोई रथ आदि सवारी और कोई शिल्पी ऐसे रथ बनाते हैं कि जिसमें खिचरी खिच्चर जोते जाते हैं यह सब मनुष्य शिल्प हैं जो ईश्वरीय पदार्थों को देखकर उनकी नकल की जाती है यही शिल्पी कार्य्य हम सरीखे मनुष्यों के वास्ते आश्चर्य्य कर्म्म है इस्से ही शिल्प कर्म्म की वेद में प्रशंसा की गई है।

बाल्मिकीय रामायण के बाल कालकाण्ड १४ सर्गमें लिखा है, शिल्प कार्य्य में कुशल ब्राह्मणों ने प्रमाणानुसार उस में ईंटों को चुना और पश्चात् आग्न्याधान किया।



॥ ओ३म् ॥

उत्तरार्ध

वाजे वाजेऽवत वाजिनो नो धनेषु विप्रा अमृता ऋतज्ञाः। अस्य मध्वः पिवत मादयध्वं तृप्ता यात पथिभिर्देवयानैः ॥ ११ ॥

एक विंशोध्यायः । यजुर्वेद भाष्ये ।

पदार्थः—हे (अमृताः) आत्मस्वरूप से अविनाशी (ऋतज्ञाः) सत्य के जनाने हारे (वाजिनः) विज्ञान वाले (विप्राः) बुद्धिमान् लोगो तुम (वाजे वाजे) युद्ध युद्ध में और (धनेषु) धनों में (नः) हमारी (अवत) रक्षा करो और (अस्य) इस (मध्वः) मधुर रस का (पिवत) पान करो और उससे (मादयध्वम्) विशेष अनन्द को प्राप्त होओ और (तृप्ताः) तृप्त होके (देवयानैः) विद्वानों के जाने योग्य (पथिभिः) मार्गों से (यात) जाओ ॥ ११ ॥

भावार्थः—जैसे विद्वान् लोग दान से और उपदेश से सब को सुखी करते हैं वैसे ही राजपुरुष रक्षा और अभयदान से सब को सुखी करें तथा धर्म युक्त मार्गों में चलते हुए अर्थ, काम और मोक्ष इन तीन पुरुषार्थ के फलों को प्राप्त होवें ॥ ११ ॥

देखो सद्धर्म प्रचारक २० पौष सम्वत् १९६४ याने तारीख ३ जनवरी सन् १९०८। श्रीमान् विद्वद्वर्य पण्डित शिवशङ्कर जी शर्मा काव्य तीर्थ मैथिल कुलभूषण साक्षात् धर्म मूर्ति पक्षपात रहित वेदादि सच्छास्त्रों के परम विद्वान् उपनिषद् के भाष्यकार अनेक सामाजिक ग्रन्थों के जन्म दाता अपने जाति विचार नामक लेख में प्रतिपादन करते हैं कि "नमस्तक्षभ्यो १६—१७" तक्षा जो आजकल

मिस्तरी, खाती आदि नामों से पुकारे जाते हैं उन्हें सत्कार करो रथकार रथके बनाने वाले जो हैं उन्हे सत्कार करो। सच बात तो यह है कि सृष्टि की प्रारम्भावस्थामें वसिष्ठ, विश्वामित्र, अंगिरा दीर्घतमा, आदि ऋषियों ने ही रथ बनाना मकान निर्माण करना वर्तन बनाना इत्यादि से लेकर चक्की उलूखल आदि छोटी २ शिल्पकारी पर्यन्त सिखलाया। क्योंकि ऋषि के बिना सिखलाये सर्व विद्यायें नहीं फैलतीं अभी तक जङ्गली जाति मे लोग कूटना पीसना पकाना नहीं जानते हैं। इस हेतु यदि इन कामों के करने से कोई नीच समझा जाये तो प्रथम ऋषि लोग ही नीच समझे जांयगे। इस हेतु पेशा में कोई उत्तम और नीच नहीं हो सकता। और वेद में कहीं इसका वर्णन भी नहीं है। वेदों मे प्रत्येक व्यवसाय प्रायः विद्वानों के कर्त्तव्य कहें गएहैं। मै ऋग्वेद से यहां एक सूक्त का अर्थ दिख-लाता हूं जिस से मालूम होगा कि मनुष्य मात्र केलिये सब व्यव साय हैं। इतना ही नहीं किन्तु विद्वान् लोग इस काम को करें ऐसी आज्ञा पाई जाती है। मन्द्रां कृणु ध्वम्। ऋ० १०—१०—२

हे मनुष्य! अपनी बुद्धि को बढ़ाओ उत्तम २ सुखप्रद स्थानों की रचना करो। अरित्रों से पूर्ण नौकाएं बनाओ बाण बनाओ। आयुधागार रचो। हे सखाओं मित्रो इन सबों के साथ २ उत्कृष्ट यज्ञ भी किया करो।

देखो हिन्दी बङ्गबासी ता० ११ मई सन् १६०८

श्रीमान् पं० जयदत्त जी शर्म्मा लिखते हैं। ब्राह्मणों ही के प्रभाव से अधिक उन्नति हुई है। उन्हों ने सब प्रकार की विद्याओं की रच-ना कर उन्हें उच्चश्रेणी अथवा महत्व को पहुंचा दिया इन बिलक्षण बिद्याओं का अभ्यास करने से इस देश के कोटिशः मनुष्य कृतकृत्य होगए अर्थात् ब्रह्म को जान ब्रह्म ही होगए और अनेकों ने स्वर्गा पवर्ग लाभ किया इन पार लौकिक विद्याओं के अतिरिक्त यह लौकि-क विद्याओं को भी उच्चश्रेणी को पहुंचाया और जो जिन वर्णो से सम्बन्ध रखता है, उन्हीं से उन लोगों को सिखला कर (युद्ध, ज्योतिष, चिकित्सा, सङ्गीत, चित्रशिल्पादि,) उस में उन को निपुण बनादिया।

विश्वकर्मा ऋषियों के सुनाम।

वामदेव: परुच्छेप, दीर्घतमा, अगस्त्य, विश्वमित्र, कण्व,
१ २ ३ ४ ५ ६
मधुच्छन्द आत्रेय, विभ्ररात्रेय, गौतम, वसिष्ठ, परमेष्ठी, भारद्वाज
७ ८ ९ १० ११ १२ १३
भरताव, वत्स, सुश्रुत, सर्वस्यु।
१४ १५ १६ १८

यह उपर्युक्त ऋषिगण विश्वकर्मा या शिल्पकार नाम से वेदों में प्रसिद्ध हैं इन के अतिरिक्त और भी अनेक ऋषियों के सुनामों का वर्णन वेदों में पाया जाता है जिसे हम विस्तार भय से यहां प्रकाशित करना योग्य नहीं समझते हैं। यह उपर्युक्त ऋषि वेद में उन मन्त्रों के मन्त्रार्थ द्रष्टा ऋषि हैं जिन में शिल्प विद्या को परमात्माने कूट २ कर भरा है अतएव वेदों की विद्या मानता में शिल्पकरों को अनुलोमज प्रतिलोमज कहने वाला स्वयम् अपमानित होगा क्यों कि सृष्टि की प्रारम्भावस्था में जब ऋषिगण ही शिल्पकार सिद्ध हुए जिन्हें कोई भी वर्णसङ्कर, अनुलोमज, प्रतिलोमज कहने के लिये मुख नहीं खोलसकता तो उनकी सन्तान कैसे उपर्युक्त शब्दों की अधिकारिणी होसकती है क्या कोई विद्वान् इसबात को स्वी करसकता है कभी नहीं कदापि नहीं।

"क्रमेण कृतचूड़ाकरणादिक्रियाकलापस्य शैशवमतिचक्राम चन्द्रापीडस्य। तारापीडो व्यासंगविघाताय वहिर्नगरादनुसिप्रमर्धक्रोशमात्रायाम्, अतिमहता तुहिनगिरिशिखरमालानुकारिणा सुधाधवलितेन प्राकारमण्डलेन परिवृतम्, अनुप्राकारमाहितेन महता परिखावलयेन परिवेष्ठितम्, अति दृढ़कपाटसंपुटम् उद्घाटितैकद्वार प्रवेशम्, एकान्तोपरचिततुरङ्गवाह्यालीविभागम्, अधःकल्पितव्यायामशालम्, अमरागाराकारं विद्या मन्दिर मकारयत्। सर्वविद्याचार्याणां च संग्रहे यत्नमातिमहान्त मन्वतिष्ठत्। तत्रस्थं-

च तं केसरि किशोरकमिव पञ्जरगतं कृत्वा प्रतिषिद्धनिर्गमम्, आचार्यकुलपुत्र प्रायपरिजनपरिवारम्, अपनीताशेषशिशुजनक्रीडाव्यासंगम्,

अनन्यमनसम्, अखिल विद्योपादानार्थ माचार्येभ्यश्चन्द्रापीडं शोभने दिवसे, वैशम्पायनद्वितीयमर्पयां बभूव। प्रतिदिनं चोत्थायोत्थाय सह विलासवत्या विरलपरिजनस्तत्रैव गत्वैनमालोकयामासराजा। चन्द्रापीडोऽप्यनन्यहृदयतया तथायन्त्रितो राज्ञाचिरेणैव यथास्वमात्मकौशलं प्रकटयद्भिः पात्रवशादुपजातोत्साहै राचार्यैरुपदिश्यमानाः सर्वा विद्या जग्राह । मणिदर्पण इवातिनिर्मले तस्मिन् संचक्राम सकलः कलाकलापः । तथाहि । पदे, वाक्ये, प्रमाणे, धर्मशास्त्रे, राजनीतिषु चापचक्र चर्मकृपाणशक्तितोमरपरशुगदाप्रभृतिषु, सर्वेष्वायुधविशेषेषु, रथचर्यासु, गजपृष्ठेषु, वीणावेणु मुरजकांस्यतालदर्दुरपुटप्रभृतिषु वाद्येषु, भरतादिप्रणीतेषु नृत्यशास्त्रेषु नारदीयप्रभृतिषु गान्धर्ववेदविशेषेषु हस्तिशिक्षायाम्, तुरङ्गवयोज्ञाने, पुरुषलक्षणे, चित्रकर्म्मणि। पत्रच्छेद्ये, पुस्तक व्यापारेलेख्यकर्म्मणि, सर्वासु द्यूत कलासु, शकुनिरुतज्ञाने, ग्रह गणिते, रत्नपरीक्षासु, दारु कर्म्मणि, दन्त व्यापारे, वास्तुविद्यासु आयुर्वेदे, यन्त्र प्रयोगे, विषापहरणे, सुरुङ्गोपभेदे, तरणे, लंघने, प्लुतिषु, इन्द्रजाले, कथासु, नाटकेषु, आख्यायिकासु, काव्येषु, महाभारतेतिहासपुराणरामायणेषु, सर्वलिपिषु, सर्वदेशभाषासु सर्वसंज्ञासु सर्वशिल्पेषु छन्दःसु, अन्येषुचापि लोकविशेषेषु कौशलमवाप ।

इसी प्रकार क्रम से चूड़ाकरणादि संस्कार हो चुकने पर चन्द्रापीड की बाल्यावस्था गुज़र गई। राजा तारपीड ने व्यासङ्ग को हटाने के लिये नगर के बाहर सिप्रा नदी के समपि आध कोस लम्बा, नड़ी भारी श्वेत चौगिर्द की दीवार से घिरा हुआ, उसी दीवार के साथ २ बाहर की ओर खुदी हुई खाई से युक्त, बड़े दृढ़ दरवाज़ों वाला, एक बड़े द्वार से सुभूषित, एक तरफ़ बनाई हुई अश्वादि सवारी योग्य जन्तुओं के समूह के रहने के स्थान से युक्त, नीचे की तरफ़ एक व्यायाम शाला से मण्डित देवों के गृह के समान एक विद्या मन्दिर बनवाया। राजा ने सब विद्याओं के सङ्ग्रह में भी बड़ा भारी प्रयत्न किया। वहां पिञ्जरे में बंधे हुवे शेर के बच्चे की तरह उस के बाहर जाने का निरोध करके, केवल आचार्य्यों के पुत्र परिवार के साथ, **छोटे बच्चों को समस्त खेल कूदों का त्याग करवा कर**, केवल पठन मात्र में प्रयुक्त करके सब विद्याओं के अधिगम के लिये, राजा ने चन्द्रापीड को वैश्म्पायन के सहित आचार्यों के हाथ में अर्पित करदिया तारापीड प्रतिदिन विलासवती के सहित थोड़े से साथियों के साथ उसे एक बार देख जाता था। चन्द्रापीड भी उत्तम पात्र के मिलने से अधिक उत्साह युक्त आचार्य्यों द्वारा अति कौशल से शिक्षित किया जाकर शीघ्र ही सब विद्याओं में प्रवीण होने लगा। जैसे मीन के दर्पण में सब वस्तुओं का यथार्थ स्वरूप प्रकाशित होता है वैसे ही उस में भी सब विद्यायें प्रकाशित होने लगीं। व्याकरण, साहित्य न्याय, धर्म्मशास्त्र, राजनीति, धनुष, चक्र, ढाल, तलवार, बरछा, भाला, कुल्हाड़ा, गदा आदि सब युद्ध के शस्त्रों में, रथ चलाने में, हाथी की सवारी करने में सितार बांसुरी, गुरज, छैने, ताल, ढोल आदि समस्त बाजे बजाने में भारत आदि प्रणीतनास शास्त्रों में नारदादि कृत गन्धर्व वेद विशेषों में हाथी को ठीक रास्ते पर चलाने में, घोड़े की अवस्था जानने की विद्या

में पुरुषों के लक्षण पहिचानने में चित्र बनाने में पत्र छेद्य (Paper cutting) में पुस्तक रचना में, लेखन कला में, द्यूत कलाओं में पक्षियों के शब्दों के पहिचानने की विद्या में, ग्रहों की गणित में, रत्नों के पहिचानने में बढ़ई के कार्य्य में, दन्तों की रचनादि की विद्या में गृहविद्या में (इञ्जनीयरिङ्ग) वैद्यक शास्त्र में यन्त्रों के प्रयोग (Use Machines) में बिषउतारने की विद्या में सुरङ्ग खोदने में तैरने कूदने और फांदने में, विज्ञान के अद्भुत परीक्षणों में, कथा नाटक आख्यायिका काव्य महाभारत इतिहास पुराण रामायण आदि में, सब प्रकार की लिपियों में, सब देश भाषाओं में, सब प्रकार की संज्ञाओं में, (वैज्ञानिकादि नाम करने की क्रिया में) सब शिल्पों में, छन्द (शास्त्र) में. और अन्य भी अनेक विद्याओं में वह निपुणता को प्राप्त होगया।

पाठक! चित्रभानु के पुत्र तथा "राजदेवी" की गोद के सुयोग्य-लाल वात्स्यायनगोत्री कविवर बाणभट्ट कादम्बरी नामक संस्कृत के प्रसिद्ध ग्रंथ के निर्माण कर्ता कि जिसका प्रमाण हम नीचे प्रकाशित करेंगे यह भारत वर्ष के एकमहातेस्वी बलवान राजा "श्रीहर्ष', या "हर्षबन्धन,, के राज्य समय में कि जिनको कन्नौज सिंहासनारूढ़ होने का समय विक्रमी संवत् ६६९ प्रसिद्ध हुए थे राजा ने दक्षिण भाग के अतिरिक्त सम्पूर्ण भारत को ३५ बर्ष घोर संग्राम करने के पश्चात् जय कर लिया था यद्यपि राजा ने अपनी अन्तिम अवस्था में "बौद्धमत" को स्वीकार कर लिया था परन्तु फिर भी उनका संस्कृत भाषा की कविता में आस्वाद लेना उनकी विद्वत्ता का पूर्ण साक्षी है राज्य दरवार में संस्कृत के अनेक कवियों को आश्रय मिला करता था उन्हीं राजाश्रित कवियों में से बाण भट्ट जी कि जिनका वर्णन हम अल्प पंक्तियों में कर चुके हैं थे। जिसे यह १२९९ वीं वर्ष व्यतीत हो रहा है आप देखेंगे कि

गुरुकुल ऐसे पवित्र स्थानों में बढ़ई का कार्य्य "राजपुत्रों तक को सिखलाया जाता था हाय उन ब्रह्मचारियों और राजपुत्रों को आज क्यों अनुलोमज, प्रतिलोमज व शूद्रादि कह अपमानित किया जाता है अब कृपाकर बतलाईये कि मान्य हानि का दोष भागी कौन है। क्या उन की उपस्थित में कोई भी ऐसे दुर्वचन निकालने का साहस कर सकता था हा समय तू जो कुछ कहलावे सो थोड़ा ही है।

इतने प्रमाणों को उपस्थित करते हुए भी यदि हम मान्य हानि करने के दोषी हैं तो न्याय का अन्त हो चुका यदि नहीं तो अपने असत्य कथन पर इस बे समझी के कारण अवश्य पश्चात्ताप करिये।

डाक्टर जी० वाइज़ (G. Wiese) जर्मनी देश के एक प्रसिद्ध शिक्षक थे जिनके साथ सम्वत् १९३६ में ऋषि दयानन्द ने, अपने कुछ शिष्यों को पदार्थ तथा शिल्प शिक्षा ग्रहण करने के लिये जर्मनी भेजने के सम्बन्ध में पत्र व्यवहार किया था। उक्त महाशय के ४ पत्र वैदिक मेगज़ीन (Vedic Magazine) में छप चुके हैं। जो यह काम वैदिक आज्ञा के विरुद्ध ऋषि दयानन्द समझते तो क्या उस के लिए प्रयत्न करने की स्वयम् आज्ञा देते! अपने वेदभाष्य में स्थान स्थान पर ऋषि ने पदार्थ तथा शिल्प विद्या के सिद्ध करने की आज्ञा दी है।

कहां तक लिखता चला जाऊं, जो आर्य्य पुरुष स्वाध्याय के समय ऋषि दयानन्दकृत वेदभाष्य का पाठ करते हैं वे साक्षी देसकते हैं कि पदार्थ विज्ञान की प्राप्ति पर ऋषि दयानन्द ने बड़ा बल दिया है क्योंकि उसी की प्राप्ति को वह उन्नति की पहिली सीढ़ी समझते थे।

भारत का साररूप इतिहास समुच्चय पौराणिक दुनियां में प्रसिद्ध है। इस में अ० ३७ में नहुष=सर्प युधिष्ठिर संवाद में लिखा है कि-नहुषउवाच।

जात्या कुलेन निर्वृत्तः स्वाध्यायेन श्रुतेन वा।
वृत्तेन वा ब्राह्मणःस्यात्तन्मे वद नृपोत्तम ॥ १ ॥

युधि०-न जात्या न कुलेनापि न स्वाध्यायैःश्रुतने वा।
ब्राह्मणत्वं लभेन्मर्त्यो वृत्तमेव हि कारणम् ॥ २ ॥

अनेके मुनयस्तात तिर्यग्योनिषु संभवाः।
स्वधर्माचारनिरताः ब्रह्मलोकमितोगताः ॥ ३ ॥

बहुना किमधीतेन नटस्येव दुरात्मनः।
तेनाधीतं श्रुतं तेन योवृत्तमनुतिष्ठति ॥ ४ ॥

कपालस्थं यथा तोयं भस्रास्थं च यथा पयः।
दुष्टं स्यात्स्थानदोषेण व्रतहीने तथा श्रुतम् ॥ ५ ॥

वृत्तं यत्नेन संरक्ष्यं वृत्तमेव महानिधिः।
अक्षीणो वृत्ततोऽक्षीणो दुर्वृत्तस्तु हतो हतः ॥ ६ ॥

किं कुलेनोपदिष्टेन विपुलेन दुरात्मनः।
कृमयः किं न जायन्ते कुसुमेषु सुगन्धिषु ॥ ७ ॥

पठकः पाठकश्चैव ये चान्ये शास्त्रचिन्तकाः
सर्वे व्यसनिनो राजन् यः क्रियावान् स पण्डितः ॥ ८ ॥

तस्माद्विद्धि महाराज ! वृत्तं ब्राह्मणलक्षणम्।
चतुर्वेदोपि दुर्वृत्तः शूद्रात्परतरस्तु सः ॥ ९ ॥

योग्निहोत्रपरो दान्तः सन्तोषनिरतः शुचिः।
तपः स्वाध्यायशीलश्च तं देवा ब्राह्मणंविदुः ॥ १० ॥

येन केनचिदाच्छन्नं येन केनचिदाश्रितम् ।
येन केन शयानं च तं देवा ब्राह्मणं विदुः ॥ ११ ॥
सर्व द्वन्द्वसहो वीरः सर्वसङ्गविवर्जितः ।
सर्व भूतहितो मित्रस्तं देवा ब्राह्मणं विदुः ॥ १२ ॥
सत्त्वं दमस्तपो दानमहिंसेन्द्रियनिग्रहः ।
दृश्यते यत्र राजेन्द्र ! सब्राह्मण इति स्मृतः ॥ १३ ॥
शूद्रे चैव भवेद्वृत्तं ब्राह्मणे न च विद्यते ।
शूद्रोपि ब्राह्मणो ज्ञेयो शूद्रो ब्राह्मण एव च ॥ १४॥
काम क्रोधानृत द्रोहलोभ मोह मदादयः ।
न सन्ति यस्मिन्राजेन्द्र ! तं देवा ब्राह्मणं विदुः ॥१५॥
अदेवं दैवतं कुर्याद् दैवतं चाप्यदैवतम् ।
शूद्रोपि विप्रो मन्तव्यो शूद्रविप्राविति क्रमौ ॥१६॥
नजातिः कारणं तात ! गुणाः कल्याणहेतवः ।
सद्वृत्तस्थोहि चांडालः सोपि सद्गुणमाप्नुयात् ॥१७॥
कैवर्त्तजन पद्मासमृष्यश्रृङ्गं मृगी यथा ।
क्षितिश्चैव दधीचिश्च सिद्धास्ते किं न वृत्ततः ॥ १८ ॥
क्षत्रियाणां कुले जातो विश्वामित्रो महामुनिः ।
तस्माद्वृत्त विहीनो यो रक्षोभिः परिपद्यते ॥ १९ ॥
मा विषीद महाव्याघ्र ! राक्षसेषु पवित्रता ।
शिल्प मध्ययनं नाम वृत्तं ब्राह्मण लक्षणम् ॥ २० ॥
अग्निहोत्राश्च वेदाश्च राक्षसानां गृहे गृहे ।
दया सत्यश्च शौचं च राक्षसेभ्यो निवर्त्तत ॥ २१॥

भावार्थ ।

नहुष कहता है कि हे नृपोत्तम (राजा युधिष्ठिर !) जाति से, या कुल से या स्वाध्याय से, या बहुश्रुत होने से ब्राह्मण होता है या वृत्त (गुण कर्म स्वभाव) से ब्राह्मण होता है ? यह मेरे प्रति कहिये ॥ १ ॥ युधिष्ठिर बोले कि न जाति से न कुल से न वेद पढ़ने से न बहुश्रुत होनेसे मनुष्य ब्राह्मण होता है, केवल (वृत्त) गुण कर्म स्वभाव ही ब्राह्मणत्व का कारण है ॥ २ ॥ हे तात ! अनेक मुनि जन तिर्यक् योनियों से उत्पन्न हुवे अपने धर्म और आचार के कारण यहां से ब्रह्मलोक को चले गये ॥ ३ ॥ नट जैसे दुरात्मा के बहुत पढ़ने से क्या होता है । वही पढ़ा है, उसी ने श्रवण किया है जो शुभ गुण कर्म स्वभाव में स्थित है ॥ ४ ॥ जैसे खोपड़ी में भरा जल और मशक में भरा दूध स्थान दोष से अशुद्ध हो जाता है ऐसे ही वृत्त-हीन का पढ़ना सुनना है ॥५॥ वृत्त की यत्न से रक्षा करे, वृत्त ही महा निधि बड़ी दौलत है । जो वृत्त से क्षीण नहीं वही अक्षीण है, दुर्वृत्त तो मरा है मरा है ॥ ६ ॥ दुरात्मा के बड़े कुल से क्या है । पढ़ने पर उपदेश से क्या है । क्या सुगन्धियुक्त फूलों में कीड़े पैदा नहीं होते ॥ ७ ॥ पढ़ने पढ़ाने वाले और जो शास्त्र विचारने वाले हैं हे राजन् ! सब व्यसनी हो सकते हैं । जो क्रियावान् है सो ही पण्डित है ॥ ८ ॥ इस लिये हे महाराज ! वृत्त को ही ब्राह्मण का लक्षण जानो । चारों वेदों से संयुक्त भी दुर्वृत्त, शूद्र से भी नीच है ॥ ९ ॥ जो अग्निहोत्री दयावान् सन्तोषरत तपस्वी स्वाध्याययुक्त शूद्र है उस को देवता ब्राह्मण जानते हैं ॥ १० ॥ जिस के जैसे तैसे वस्त्र जैसा तैसा स्थान जैसे तैसे सोरहना (अर्थात् कुछ आडम्बरादि की इच्छा न हो) उस को देवता ब्राह्मण जानते हैं ॥ ११ ॥ सब कष्टों का सहन करे, सब सङ्गों से पृथक् रहै सब भूतमात्र का हितैषी मित्र हो उसे देवगण ब्राह्मण कहते हैं ॥१२॥ सत्त्व, दम, तप, दान, अहिंसा, इन्द्रियनिग्रह जिस में दीखें वह ब्राह्मण कहाता है ॥ १३ ॥ शूद्र में वृत्त हो और ब्राह्मण में वृत्त न हो तो शूद्र भी ब्राह्मण है और ब्राह्मण शूद्र है ॥ १४ ॥ हे राजेन्द्र ! जिस में काम, क्रोध, झूंठ, द्रोह, लोभ, मोह, मदादि न हों उस को देवता ब्राह्मण कहते हैं ॥१५॥

अदेव को देव और देव को अदेव (वृत्त) कर देता है। शूद्र को ब्राह्मण, ब्राह्मण को शूद्र भी (वृत्त) कर देता है। हे तात! जन्ममात्र ब्राह्मणत्व का कारण नहीं, किन्तु गुण कल्याण के कारण हैं ॥१७॥ सद्वृत्त चाण्डाल भी सद्गुणों को प्राप्त हो जाता है। ऋष्य श्रृङ्ग की मृगी माता धीवर जनपदी थी और दधीचि की माता क्षिति नाम की थी वह सिद्ध थे। क्या वृत्त ही कारण न था? ॥ १८ ॥ क्षत्रिय कुल में उत्पन्न हुवे विश्वामित्र महामुनि थे। इस लिये वृत्तविहीन राक्षसीभाव को प्राप्त होते हैं॥ १९ ॥ हे राजन्! घबराओ मत! (अर्थात् कुछ आश्चर्य नहीं है) राक्षसों में भी पवित्रता होती है शिल्प का अध्ययन करना अर्थात् शिल्प नामक कार्य्य को करने पर उसमें योग्यता प्राप्त करना वृत्त ब्राह्मण का लक्षण है ॥ २० ॥ अग्निहोत्र और वेद राक्षसों के घर २ में होता है परन्तु दया, सत्य और शुद्धि राक्षसों से पृथक् रहते हैं।

यह इतिहास समुच्चय भी नवीन ग्रन्थ नहीं है ४०० वर्ष तक से इसका पता चलता है। कई एक पुराणों के टीकाकारों ने भी इस का प्रमाण दिया है। श्रीमद्भागवत के टीकाकार श्रीधरस्वामी ने भी प्रमाण दिये हैं। निर्णयसिन्धु में भी प्रमाण पाया जाता है।



वेद प्रमाणः

तं शश्वतीषु मातृषु वना आ। वीत मश्रितम् तत्र सन्तं गुहा हितं सुवेदं कूचिदार्थिनम् ॥ ६ ॥ ऋ० मं० ४ अ० १ सु० ७ ॥

पदार्थः—हे विद्वानों आपलोग (शश्वतीषु) अनादिकाल से वर्त्तमान (मातृषु) आकाशआदि पदार्थों में (वन) किरण में विद्यमान (गुहा) बुद्धि में (हितम्) स्थित (सुवेदम्) उत्तम विज्ञान जिसका (कूचिदार्थिनम्) जो कहीं बहुत अर्थों से युक्त (अश्रितम्) और नहीं सेवन कियागया (आवीतम्) व्याप्त (तम्) उस (चित्रम्) अद्भुत गुण कर्म स्वभाव वाली बिजली नामक अग्नि को जान के कार्यों को सिद्ध करो ॥ ६ ॥

भावार्थः—जो मनुष्य सर्व पदार्थों में अलग ही अलग वर्त्तमान अग्नि को तत्व से जानते हैं वे सब काम साध सकते हैं ॥ ६ ॥

ससस्य यद्वियुता सस्मिन्नूधन्नृ तस्य धामन्रणयन्त देवाः। महाँ अग्निर्नमसा रातहव्यो वेरध्वराय सदमिद्द तावा ॥ ७ ॥ ऋ० मं० ४ अ० १ सू० ७ ॥

पदार्थः—जो (देवाः) विद्वान् लोग (नमसा) पृथ्वी आदि अन्न के साथ वर्त्तमान (रातहव्यो) जिसने ग्रहण करने योग्य पदार्थ दिया (ऋतावा) जो जलका बिभाग करने वाला (महान्) महान् (अग्निः) बिजुली रूप अग्नि (वेः) पक्षी के सदृश (सदम्) प्राप्त होने योग्य स्थान को प्राप्त कराता है (यत्) जिस अग्नि में (सस्मिन्) सब (उधन्) अवयवों में और (ऋतस्य) सत्य के (धामन्) स्थान में (ससस्य) स्वप्न सम्बन्ध से (वियुता) वियुक्त अर्थात् विना स्वप्न वस्तुएं (रणयन्त) शब्द करती हैं उसको (अध्वराय) अहिंसनीय

व्यवहार के लिये (इत्) जानते ही हैं वे सत्य के जानने वाले होते हैं ॥ ७ ॥

भावार्थः—हे बुद्धिमान् पुरुषो । जो अग्नि शरीर आदि में और निद्रा में प्रसिद्ध होता है वह बड़ा होने से सर्वत्र व्यापक है ॥ ७ ॥

ते मर्मृजन्त ददृवांसो अद्रिंतदेषामन्ये अभितोवि वोचन् । पश्वयन्त्रासो अभिकारमर्चन्वि दन्त ज्योतिश्चकृपन्त धीभि ॥ १४ ॥ ऋ० मं० ४ अ० १ सु० १

पदार्थः—हे मनुष्यो जो हम लोगों के मनन करने और पालन करने वाले (अद्रिम) मेघ के (ददृवांसः) तोड़ने वाले किरणों के सदृश हम लोगों को (मर्मृजत) शुद्ध होकर शुद्ध करते हैं (एषाम्) इनके मध्य में (अन्ये) दूसरे लोग (तत्) इस कारण (अभितः) चारों ओर से सन्मुख (वि वोचन) उपदेश देते (पश्वयन्त्रासः) देखे हैं यन्त्र जिन्हों ने ऐसे होते हुए (कारम्) शिल्प कृत्य का (अभि अर्चन्) सत्कार करते (धीभिः) बुद्धियों वा कर्मों से (ज्योतिः) प्रकाश को (विदन्त) जानते और सबों में (चकृयन्त) कृपालु होते हैं (ते) वे सब लोगों से सत्कार कराने योग्य होवें ॥ १४ ॥

भावार्थः-इस मंत्र में वाचकलु०— हे मनुष्यो जो वेद उपवेद अंग और उपांगों के पार जाने और शिल्प विद्या के जानने वाले विद्वान् लोग लोगों की कृपा से सब को उत्तम प्रकार शिक्षा का उपदेश कर के विद्या युक्त करें वे सब लोगों से सत्कार करने योग्य होवें ॥१४॥

अनश्वो जातो अनभी शुरु कथ्योः रथस्त्रिचक्रः परि वर्त्तते रजः । महत्तद्वो देव्यस्य प्रवाचनं द्यामृभवः पृथिवीं यच्च पुष्यथ ॥१॥ ऋ० मं० ४ अ० ४ सु० ३६

पदार्थः—हे (ऋभवः) बुद्धिमानो (वः) आप लोगों के लिये (अनश्वः) घोड़ों से रहित (अनभीशुः) जिसने किसी का दिया नहीं लिया वह

(उक्थ्यः) प्रशंसा करने योग्य (त्रिचक्रः) तीन पहियों से युक्त (रथः) बाहन विशेष (जातः) उत्पन्न हुआ (यत्) जो (महत्) बड़े [रजः] लोक समूह के [परि] सब ओर [वर्त्तते] वर्त्तमान है [तत्] वह [देव्यस्य] विद्वानों में उत्पन्न कर्म का [प्रवाचनम्] उपदेश सब ओर वर्त्तमान है उससे [द्याम्] प्रकाश [पृथिवीम्] और अन्तरिक्ष वा भूमि को आप लोग (पुष्यथ) पुष्ट करो ॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्यो ! तुम लोग अनेक प्रकार के अनेक कला चक्रों तथा पशु घोड़ा के बाहन से रहित अग्नि और जल से चलाये गये बिमान आदि बाहनों को बना पृथिवी, जलों और अन्तरिक्ष में जा आकर और ऐश्वर्य्य को प्राप्त होकर पूर्ण सुख वाले होओ ॥ १ ॥

रथं ये चक्रुः सुवृतं सुचेतसोऽविह्वरन्तं मनसस्परि ध्यया । ताँ ऊन्व१स्य सवनस्य पीतय आवो वाजा ऋभवो वेदयामसि ॥२॥ ऋ० मं० ४ अ० सू० ३६

पदार्थः-हे (वाजाः) हस्तक्रिया को प्राप्त हुए (ऋभवः) बुद्धिमानो (ये) जो वः आप लोगों को (अस्य) इस (सवनस्य) शिल्प विद्या से उत्पन्न हुए कार्य की (पीतये) तृप्ति के लिये (सुचेतसः) उत्तम विज्ञान वाले (मनसः) विज्ञान से [ध्यया] ध्यान से (अविह्वरन्तम्) नहीं टेढ़े चलने वाले (सुवृतम्) उत्तम प्रकार अंग और उपांगों के सहित (रथम्) विमान आदि बाहन को (परि, चक्रुः) सब ओर से बनाते हैं और जिनको हम लोग (आ, वेदयामसि) जनाते हैं (तान्) उनको (नु) निश्चय करके (उ) ही आप लोग लोग शीघ्र ग्रहण कीजिये ॥२॥

भावार्थः-हे बुद्धिमानों ? जो बाहनों के बनाने और चलाने में चतुर शिल्पी जन होवें उनका ग्रहण और सत्कार करके शिल्प विद्या की उन्नति करो ॥२॥

तद्वो वाजा ऋभवः सुप्रवाचनं देवेषु बिम्वो अभव-न्म हित्व नम। जिव्री यत्सन्ता पिरा सना जुरा पुनर्यु वाना चरथाय तक्षय॥३॥ ऋ० मं० ४ अ० ४ सु० ३६

पदार्थः—हे (वाजाः) अन्न आदिकों से युक्त (ऋभवः) बुद्धिमानो (विम्वा) सकल विद्याओं में व्याप्त (यत्) जो (वः) आपलोगों के प्रति (देवेषु) विद्वानों में (महित्वनम्) प्रतिष्ठा को (सुप्रवाचनम्) उत्तम प्रकार पढ़ाना और उपदेश करना (अभवत्) होवे (तत्) उसको प्राप्त होकर (जिव्री) जीवते हुए (सन्ता) विद्यमान और (सनाजुरा) सदा वृद्धावस्था को प्राप्त (पितरा) माता पिता (चरथाय) चलने विज्ञान वा भोजन के लिये (युवः) फिर (युवाना) युवावस्था को प्राप्त हुए (तक्षथ) करो॥३॥

भावार्थः—हे बुद्धिमान् जनो! जो आपलोग विद्वानों में स्थित होकर उनसे अध्ययन और उपदेश करें तो ज्ञान वृद्ध होने से युवावस्था को प्राप्त हुए भी वृद्ध होकर सत्कृत होवें॥३॥

एकं विचक्र चमसं चतुर्वयं निश्चर्मणो गामरिणीत धीतिभिः। अथा देवेष्वमृतत्व मानशुः श्रुष्टीवाजा ऋभवस्तद्व उक्थ्यम्॥४॥ ऋ० मं० ४ अ० सू०॥३६॥

पदार्थः—हे (वाजाः) ऐश्वर्य्य से युक्त (ऋभवः) बुद्धिमान् जनो (तत्) वह [वः] आपलोगों [उक्थ्यम्] प्रशंसा करने योग्य कर्म कि जिससे आपलोग [श्रुष्टी] शीघ्र [धीतिभिः] अङ्गुलियों के सदृश विलेखनगतियों से [चर्मणः] त्वचा की [गाम्] भूमि को [अरिणीत] प्राप्त हुजिये [अथ] इस के अनन्तर इससे [देवेषु] विद्वानों में [अमृतत्वम्] मोक्षसुख को [आनश] प्राप्त हुजिये और जैसे [एकम्] सहाय रहित अर्थात् अकेले [चमसम्] मेघों के सदृश

विभक्त (चतुर्वयम्) चार हम लोग [वि, निः, चक्र] करें वैसे आप लोग भी करें ॥४॥

भावार्थः—इस मंत्रमें वाचकलु०—जो प्रशंसित कर्मों को करते हैं वे व्यावहारिक और पारमार्थिक सुखको प्राप्त होकर पण्डितवरों में प्रशंसा को प्राप्त होते हैं ॥४॥

ऋभुतो रयिः प्रथम श्रवस्तमो वाज श्रुतासो यमजीजनन्नरः । विभ्वतष्टो विदथेषु प्रवाच्यो यं देवासोऽवथा सविचर्षणिः ॥५ ॥ऋ० मं० ४ सू० ॥३६॥

पदार्थ—हे [देवासः] विद्वानो जो (वाज श्रुतासः) विज्ञान के सुनने वाले (नरः नायक जन [यम्) जिसको (अजाजनन्) उत्पन्न करते है (सः) वह (विभ्वतष्टः) व्यापक पदार्थों में नहीं पण्डित उनको नहीं जाने वाला (विदथेषु) जानने योग्य व्यवहारों में (प्रवाच्यः, कहने के योग्य होवे इससे (ऋभुतः) बुद्धिमानों के समीप से प्रथम (श्रवस्तमः) अत्यन्त प्रथम श्रवण वा अन्न जिससे वह: (रयिः] धन प्राप्त होवे और (यम्) जिस की आप लोग (अवथ) रक्षा करते हो (विचर्षणिः) संपूर्ण देखने योग्य पदार्थों को देखने वाला मनुष्य होवे ॥५॥

भावार्थः—वे ही विद्वान् उत्तम हैं कि जो विद्यार्थियों को विद्वान् करते हैं उन्हीं को पढ़ाना और उपदेश देना चाहिये पदार्थविद्या से रहित होवें, वेही सुखी होते हैं जो विद्या और धनको प्राप्त होकर धर्मात्मा होवें ॥ ५ ॥

स वाज्यर्वा स ऋषिर्वचस्यया स शूरीअस्ताष्टतनासु दुष्टरः॥ स रायस्पोष ससुवीर्य्यंदधेयंवाजोविभ्वाँ ऋभवोयमाविषुः ॥ ६ ॥ ऋग्वेदः मं० ४। अ४। सू० ३६॥

पदार्थः—हे मनुष्यो (ऋभवः) बुद्धिमान् जन (विभ्वा) व्यापक पदार्थ से (यम्) जिसको (आविषुः) विद्यायुक्त करें और (यम्) जिस

को (वाजः) विज्ञानवान् धारण करता है (सः) वह (वचस्यया) अत्यन्त प्रशंसा के साथ (अर्वा) उत्तमगुणों को प्राप्त कराने वाला (वाजी) विज्ञानयुक्त (सः) वह (ऋषिः) वेदार्थ को जानने वाला (सः) वह (पृतनासु) शत्रुओं की सीनाओं में (दुष्टरः) दुःख से उल्लङ्घन करने योग्य (शूरः) वीर पुरुष (अस्ता) शत्रुओं को फेंकने वाला होता है (सः) वह (रायः) धन की (पोषम्) पुष्टि और (सः) वह (सुवीर्य्यम्) उत्तम वल और पराक्रम को (दधे) धारण करता है ॥६॥

भावाः–जो मनुष्यों विद्वानों के संग से गुणों के ग्रहण करने की इच्छा करते हैं वे प्रशंसित, शत्रुओं से नहीं जीतने योग्य, धनाढ्य और पराक्रमी होते हैं ॥६॥

'तक्षा के लिये धीर, कवि, और विपश्चित् शब्द'

श्रेष्ठं वः पेशोअधिं धायिदर्शतं स्तोमोवाजा ऋभवस्त जुजुष्टन। धीरांसोहिष्ठा कवयों विपश्चितस्तान्वएना ब्राह्मणा वेदयामसि ॥७॥ ऋग्वेदः मं० ४। अ० ४। सू० ३६॥

हे (वाजाः+ऋभव) विज्ञानी त ओ! (वः) आपका (श्रेष्ठ) श्रेष्ठ (दर्शतम्) दर्शनीय (पेशः) रूप (अधि+धायि) सर्वत्र प्रसिद्ध है इस कारण (स्तोमः) यह हमारा स्तव है (तम्+जुजुष्टन) इसेसेविये। आप लोग (धीरासः) धीर (कवयः) कवि और (विपश्चतः) विपश्चित्=विद्वान् (हि+स्थः) प्रसिद्ध हैं (तान्+वः) उन प्रसिद्ध आप लोगों को एना+ब्रह्मण इस वाणी से (आवेदयामसि) आवेदनकरते हैं। निपुण तक्षा की प्रशंसा करनी चाहिये। उस के यश को बढ़ा चढ़ाकर गाना चाहिये जिस से कि वह उत्साहित हो नवीन कला कौशल और शिल्प विद्या निकाला करे। यह इस से उपदेश है। श्रीमान पण्डित शिवशङ्कर जी शर्मा काव्य तीर्थ रचित वेद तत्त्व प्रकाश पृष्ठ १०३॥

एतं वां स्तोम मश्विनावकर्म्मा तक्षाम भृगवो न रथम्। न्यमृक्षाम योषणां न मर्य्ये नित्यं नमूनुं तनयं-दधानाः १०। ३८-। १४

(भृगवः+न+रथम्) जैसे भृगुगण अर्थात् बुद्धिमान् तक्षागण सुन्दर सुगाठित रथ प्रस्तुत करते हैं तद्वत् (अश्विनौ) हे अश्विनौ हे राजन्! तथा राज्ञि! (वाम्) आप दोनों के निमित्त (एतम्+स्तोमम्) स्तोमको (अकर्म) बनाया है (अतक्षाम) अच्छे प्रकार ग्रथितकिया है और (मर्य+ न +योषणाम्) जैसे विवाह के समय जामाता के दिने के हेतु कन्या को भूषणालंकृत करते हैं और जैसे (तनयनु+सूनुम्+न) वंशवृद्धिकर पुत्र को संस्कृत करते हैं तद्वत् (दधानाः) यज्ञ कर्म्म करते हुए हम लोग (नि+अमृक्षामो) आप के लिये यह स्तोम संस्कृत करते हैं उसे सुनें । सायण-(रथकाराभृगवः) भृगु का अर्थ रथकार करते हैं। इस से सिद्ध है कि बुद्धिमान् पुरुष का यह कार्य्य है । श्रीमान् पंडित शिवशङ्कर जी शर्मा काव्य तीर्थ रचित वेद तत्त्वप्रकाश पृष्ठ १०३

यूययस्मभ्यं धिषणाभ्यस्परि विद्वांसो विश्वा नर्य्याणि भोजना। द्युमंत वाज वृषशुष्म मुत्तममानो रयिमृभवस्तक्षातावयः-॥८॥ऋग्वेद मं० ४।अं०४।सू०३६

पदार्थः-हे [विद्वांसः] विद्वानो [ऋभवः] बुद्धिमानो [यूयम्] आप लोग [अस्मभ्यम्] हम लोगों के लिये [धिषणाभ्य] बुद्धियों से [विश्व] संपूर्ण [नर्य्याणि] मनुष्यों में श्रेष्ठ वा मनुष्यों के लिये हितकारक [भोजना] पालन वा अन्न [द्युमन्म्] प्रकाशवाले [वृषशुष्म्] वलियों के बल और [उत्तमम्] श्रेष्ठ (वाजम्) विज्ञान और [रयिम्] धन का तथा [नः] हम लोगों के लिये [वयः] जीवन का (आ, तक्षत] विस्तार

कीजिये उससे सुख को (यरि, आ) सब प्रकार से बढ़ाइये ॥ ८ ॥

भावार्थः—जो विद्वान् पढ़ाने और उपदेश करने से मनुष्यों की बुद्धि बढ़ाते हैं वे सब के हितैषी जानने चाहिये ॥ ८ ॥

इह प्रजामिह रयिंरराणा इह श्रवो वीरवत्तक्षतान येन वयं चितयेमात्यन्यान्तं वाजं चित्रमृभवो ददानः॥९ ८॥ ऋग्वेद मं० ४ अ० ४ सू० ३६ ॥

पदार्थः--हे [ऋभवः] बुद्धिमानो आप लोग [इह] इस संसार में [नः] हम लोगों के लिये [प्रजाम्] उत्तम सन्तान वा राज्य को (इह) इस संसार में [रयिम्] धन को और (इह) इस संसार में [वीरवत) प्रशंसा करने योग्य वीरों के करने वाले [श्रवः] अन्न वा श्रवण को [रराणाः] देते हुए (तक्षत) प्राप्त कराओ [येन] जिससे (वयम्) हम लोग (अन्यान्) औरों के प्रति (अति, चितयेम उत्तम रीति से विज्ञान को कहें (तम) उस [चित्रम्] अद्भुत [वाजम्] विज्ञान को (न) हम लोगों के लिये [ददा] दीजिये ॥८॥

भावार्थः—जब मनुष्य विद्वानों को प्राप्त होवें तब विज्ञान सत्य श्रवण धन उत्तम प्रजा और शूरवीर युक्त सेना की याचना करें उनसे यथार्थ विद्याको प्राप्त होकर अन्यों को निरन्तर बोध करावें ॥ ८ ॥

अयं समह मा तनूह्याते जनाँ अनु । सोमपयं सुखोरथः ॥११॥ ऋ० मं० १ अ० १७ सू० १२०

पदार्थः—हे (समह) सत्कार के साथ वर्त्तमान विद्वान् आप जो (अयम्) यह (सुखः) सुख अर्थात् जिस में अच्छे २ अवकाश तथा [रथः] रमण बिहार करने के लिये जिसमें स्थित होते वह विमान आदि यान हैं जिससे पढ़ाने और उपदेश करने हारे [अनूह्याते]

अनुकूल एक देश से दूसरे देश को पहुंचाए जातेहैं उससे (मा) मुझे (जनान्) वा मनुष्यों अथवा (सोमेययेम्) ऐश्वर्य्य युक्त मनुष्यों के पीने योग्य उत्तम रस को तनु) विस्तारो अर्थात् उन्नति देओ ॥११॥

भावार्थः—जो अत्यन्त उत्तम अर्थात् जिस से उत्तम और न बन सेक उस यान का बनाने वाला शिल्पी हो वह सब को सत्कार करने योग्य है ॥११॥

ऋभुक्षणो वाजा मादयध्वमस्मे नरो मघवानः सुतस्य । आवोऽर्वाचः क्रतवो न यातां विभ्वोरथं नर्यं वर्तयन्तु ॥१॥ ऋग्वेद मं० ७। अ० ३ । सू४८ ॥

पदार्थः—हे [ऋभुक्षाणः] महात्मा [मघवानः] वहुतउत्तम धन युक्त [विभ्वः] सलक विद्याओं में व्याप्त [अर्वाचः] जो पीछे जाने वाले [वाजाः] विज्ञानवान् [नरः] मनुष्यो तुम [क्रतवः] अतीव बुद्धियों के [न] समान [सुतस्य] उत्पन्न हुए के सेवने से [अस्मे] हम लोगों को [मादयध्वम्] आनन्दित करो [आ, याताम्] आते हुए [वः] तुम लोगों के और हमारे [नर्यम्] मनुष्यों में उत्तम [रथम्] रमणीय यान को और नर [वर्तयन्तु] वर्तें ॥१॥

भावार्थः—इस मन्त्र में उपमा लङ्कार है-हे मनुष्यो ! जो विद्वान् जन तुम्हें और हमें विद्या और बुद्धि के दान से वा शिल्पविद्या से आनन्दित करते हैं वे सर्वदा प्रशंसा करने योग्य हैं ॥१॥

अवाच चक्षं पदमस्य सस्वरुग्रं निधातु रन्वायमिच्छन् । अपृच्छमन्याँ उत ते म आहुरिन्द्रं नरो वुबुधाना अशेम ॥ २ ॥ ऋ० मं० ५ अ० सू० ३० ॥

पदार्थः—शिल्प विद्या की (इच्छन्) इच्छा करता हुआ मैं जिन (अन्यान्) अन्य विद्वानो को (अपृच्छम्) पूंछूं (ते) वे (वुबुधानाः) संबोध युक्त (नरः) नायक जन विद्वान् (मे) मेरे

लिये (इन्द्रम्] विजुली को (आहुः) कहैं उस को (अस्य] इस शिल्प विद्या के [निधातुः] धारण करने वाले के (सत्वः] गुण (उग्रम्] उग्रगण, कर्म्म और स्वभाव वाले [पदम्] प्राप्त होने योग्य विज्ञान को (अनु आयम्) अनुकूल प्राप्त होऊं और अन्यों के प्रति (अव, अचचक्षम्] निश्शेष कहूं इस प्रकार (उत] भी मित्र के सदृश बर्त्तमान हम लोग अङ्ग और उपाङ्गों के सहित शिल्प विद्याओं को (अशेम) प्राप्त हो वैं ॥ २ ॥

भावार्थः—जब शिल्प आदि विद्या के जानने की इच्छा करने वाले जन विद्वानों के प्रति पूंछैं तब उन के प्रति यथार्थ उत्तर देवैं इस प्रकार परस्पर मित्र हुए विजुली आदि की विद्या की उन्नति करैं ॥ २ ॥

नोट—हमने श्रीमान् पं० रलियाराम जी सम्पादक स० ध० प्र० के लेखको यहां छापने की प्रतिज्ञा की थी परन्तु अब उसे कै एक कारणों से भूमिका के साथ छापा है कृपया वहीं देखें।

॥ **समाप्तम्** ॥



विज्ञापन २

यदि असली और नकली मैथिल जाननेकी यदि इच्छाहै तो "मैथिल नयनामृताञ्जन" जो श्रीमती "मैथिलहितकारणी सभा" अजमेर के मिथ्या आक्षेपों के उत्तर में लिखी गई है जिसमें आगरा अलीगढ़ आदि प्रान्तों के वेषधारियों के मैथिलत्व का निषेध काशीस्थ और सर्व मैथिल पण्डितों द्वारा किया गया है एकबार मंगा देखिये मूल्य केवल -) निधार्नियों को मुफ्त। डाकव्यय)॥ मात्र भेजने पर मिलेगा ॥

शिवनारायण झा

पल्टन, नं० ६जाट, एल आई

ताड़बन्द सिकन्दराबाद दक्षिण

विज्ञापन ३

"विश्वकर्म वंश निर्णय:" "मैथिल नयनामृताञ्जन" तथा "शीतल संतापहरण" नामक ग्रन्थ निम्न पते पर भी प्राप्त हो सकेंगे।

पं० गैदालाल झा

जसवन्तनगर

[illegible]टावा

पुस्तक मिलने का पता:—

पं० गैंदालालजी झा

हलवाई, जसवन्तनगर

प्रान्त इटावा



मुफ्त पाने के हक़दार विद्यार्थियों तथा निर्धनियों की सेवा में निवेदन है कि वे भी वि० क० वं० नि० की प्राप्ति के लिए ≡) का टिकट जो डाक महसूल तथा पेकिंग में खर्च करना पड़ैगा विज्ञापक के नाम भेजें ।